कमलेश्वर का नारी विषयक दृष्टिकोण

स्त्री विमर्श की अवधारणा:

लेखक सिर्फ सृजन ही नहीं करता बल्कि सृजन के साथ वह बहुत कुछ ध्वस्त भी करता है। बहुत कुछ तोड़ता है। और बहुत कुछ जिसे वह न सृजित करता है न ध्वस्त करता है उसे वह चुनौती पेश करता है। कमलेश्वर ऐसे ही कथाकार है जो अपने सृजन के साथ बहुत कुछ ध्वस्त करते है और बहुत कुछ को चुनौती पेश करते है। उन्नीसवीं शताब्दी का समय भारतीय इतिहास की दृष्टि से अत्यंत उतार-चढ़ाव, नई वैचारिकी व नये संघर्षों का समय है। इसके बीच व इसके साथ ही यह बहुत कुछ बदलने, बहुत कुछ सीखने और बहुत कुछ अर्जित करने का भी समय है। और यह उन्नीसवीं शताब्दी भारतीय इतिहास में नवजागरण का भी समय है। इसी नवजागरण के चलते बीसवीं शताब्दी में हमारी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व अन्य तरह की संरचनाओं की व्यवस्था चरमराती है। व्यवस्थाएं टूटती है। इन्ही टूटती हुई संरचनाओं से नयी सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक संरचनाएं बनती। इन्ही बनती हुई नवीन संरचनाओं में विभिन्न विमर्शों का उदय होता है। विभिन्न विचार धाराओं का उदय होता है। और यह सिलसिला लगातार चल रहा है कि किसी न किसी नये विमर्श नई विचारधारा उत्पत्ति होती रही है। एक तरह से यह हमारी वैचारिकी का युग है। लेकिन इसमे देखना यह होगा कि कौन सा विमर्श, कौन सी विचारधारा कितनी सफल व समाज के लिए कितनी कारगर है। उसकी सफलता कितनी है। और कितनी असफलता कितनी है। यह सब मूल्यांकन का विषय है। लेकिन इसके साथ मुख्य बात यह है कि विमर्श व विचारधाराएं समाज से निकलकर आ रही है यह भी एक बड़ी बात है। और सफलता-असफलता उसके बाद की बात है।

जब भारत को आजादी मिलती है उसके आस-पास से ही कमलेश्वर के लेखन की शुरूआत होती है। देश को आजादी, लोकतंत्र, मताधिकार के साथ संविधान प्रदत्त लोगों को हक व अधिकार प्राप्त होते है। लोग वैचारिक रूप से संविधान के द्वारा समृद्ध होते है। यह सब कुछ जो समाज मे बदल रहा है उसे कमलेश्वर देख रहे है। और इसकी निर्णायक भूमिका, इसके महत्ता व महत्त्वपूर्ण भूमिका मानते हुए लिखते है कि "स्वतंत्रता-प्राप्ति के साथ ही देश का वैचारिक पुनर्जन्म हुआ था। आजादी केवल राजनीतिक मूल्य के रूप में स्वीकृत नहीं हुई थी, बल्कि विचारों की एक नवक्रांति का सपना भी उससे जुड़ा हुआ था। लोकतंत्र ने जब व्यक्ति-व्यक्ति को मतदान का अधिकार दिया, तो वैयक्तिक सत्ता (व्यक्तिगत नहीं) ने अपनी गरिमा का अनुभव किया और पुरातन विधि-विधान, विचार-पद्धति, समाज-संरचना और नैतिक प्रतिमानों के आगे अपने-अपने प्रश्न-चिन्ह लगा दिए। उधर इतिहास के क्रम में जो कुछ झूठा, विगलित, कुंठित और रूढ था, उसे अस्वीकार किया गया और भारतीय संविधान ने नए समाज की संरचना की वैचारिक नींव डाली।"1 कमलेश्वर के इस विचार को यहाँ इसलिए भी रेखांकित किया जाना चाहिए कि आजादी के बाद देश में जो कुछ भी बदल रहा है उसमे संविधान, लोकतंत्र व व्यक्ति की वैयक्तिक सत्ता की अहम भूमिका है। और उन तमाम बदलाओं में से एक बदलाव है स्त्री के जीवन में बदलाव। स्त्रियों के जीवन में जो बदलाव आ रहे है या कि वह अपने हक, अधिकार, अपने सम्मान, गैरबरबारी या की अन्य जो उसकी बातें है वह जो कर पा रही है या जो आवाज उठा पा रही है उसमे संविधान का सबसे बड़ा योगदान है। कि वह कोई भी लड़ाई अपनी वैधानिक तरीके से भी लड़ लेती है। अपने हक, अधिकार, सम्मान, बराबरी के लिए संविधान का हवाला देती है। कोर्ट कचहरी का सहारा लेती है। यह सब कुछ स्त्री विमर्श या स्त्री की लड़ाई में सहायक हुआ। उसे यहाँ से ताकत मिली। वह इस ताकत को समझी। और अपने रास्ते पर आगे बढ़ी, आगे बढ़ रही है। स्त्री विमर्श के संदर्भ में इस बात को रेखांकित किया जाना चाहिए। क्योंकि स्त्री विमर्श या कि कोई अन्य विमर्श हो उसको सबसे

अधिक ताकत संविधान से प्राप्त होती है। इस तरह बीसवीं शताब्दी विभिन्न विमर्शों का समय है, जिसकी जड़ उन्नीसवीं शताब्दी के नवजागरण के साथ संविधान में गहरी धसी हुई है। और उसे मजबूती संविधान, लोकतंत्र व व्यक्ति की वैयक्तिक सत्ता से मिल रही है।

उन्नीसवीं शताब्दी के सामाजिक, राजनीतिक व धार्मिक आंदोलनों ने एक पीठिका तैयार की। जो समाज की स्थिर पड़ती हुई गति को तोड़ते है। समाज को एक गति व दिशा देते है। जिसके चलते बीसवीं शताब्दी वैचारिक रूप से एक समृद्ध शताब्दी सिद्ध होती है। और इसके फलस्वरूप ही बीसवीं शताब्दी में विचारों के सृजन, पुराने पड़ चुके विचारों के परिष्कार व नए विचारों के साथ वैचारिक सहमतियों-असहमतियों का प्रवेश होता है। एक तरह से भारतीय समाज का यह नया समय है। नए विचारों के उदय का समय है। बद्ध विचारों के टूटने उनके चरमराने का समय तथा नए विचारों के सृजन का समय है। नये विचारों के स्वागत का समय है। विभिन्न वैचारिक आंदोलनों का समय है। कुल मिलाकर देखे तो विचारों व आंदोलनों का एक मजबूत आधार यह सदी तैयार करती है। इन्ही वैचारिक आंदोलनों में बीसवीं शताब्दी में स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, प्रवासी विमर्श, किसान विमर्श, बाल विमर्श, किन्नर विमर्श जैसे विभिन्न वैचारिक विमर्श समाज से निकल कर साहित्य में आते है। जिसमे इन सबकी अपनी विचारधारा है। इनके अपने मुद्दे है। और अपनी बात को रखने की इनकी अपनी वैचारिकी है। अपना दृष्टिकोण है। अपना संघर्ष है। व इनकी अपनी शैली है। ये जीतने भी विमर्श है सबके सब उपेक्षित, दमित, शोषित वर्ग के विमर्श है। इनकी अपनी पीड़ा है। अपना दर्द है। लेकिन इनके विचार बड़े तीक्ष्ण व तार्कित होते है। और जायज भी। लेकिन कुछ को यह फालतू व बकवास लगती है। और वे लोग इसे साहित्य से अधिक व्यक्तिगत या सामाजिक रोना-धोना मानते है। और मुख्य धारा का साहित्य कभी-कभी इसे बड़े ही हेय दृष्टि से देखता है। उसके लिए यह आरोप-प्रत्यारोप का साहित्य लगता है। या साहित्य के कोटि की वस्तु यह नहीं है। ऐसी कुछ विचार धाराएं रखी जाती है। पर अब

यह सब निराधार सिद्ध हो चुका है। साहित्यिक व सैद्धांतिक महत्ता यह अपनी प्रतिपादित कर चुका है। यह अब स्थापित व मुख्यधारा के साहित्य के साथ जुड़ चुके है। इनकी भी अब अपनी एक विरासत है एक परंपरा है। महत्त्व है।

इन विभिन्न वैचारिक विमर्शों में से स्त्री विमर्श सबसे प्रतापी विमर्श सिद्ध हुआ। जिसमे स्त्री जीवन से जुड़े मुद्दों का ताप उसकी आंच उसका तेज अत्यंत प्रखर है। स्त्री विमर्श की परिधि में गाँव, शहर, किसान, मजदूर, नौकरी पेशा, गृहस्थ उच्च वर्ग, मध्य वर्ग, निम्न वर्ग, सभी धर्म संप्रदाय सभी वर्ग की स्त्रियाँ इसकी परिधि में है। सामाजिक रूप से यह अत्यंत विस्तृत व बड़ा विमर्श है। जो स्त्रियों के जीवन, उनकी दशा-दिशा, हक-अधिकार, स्वतंत्रता, समानता इत्यादि का पैरोकार करता हुआ खड़ा होता है। जो स्त्री जीवन पर चिंतन करता है। उसके सामाजिक अधिकार की बात करता है। उसके राजनैतिक अधिकार की बात करता है। उसके आर्थिक अधिकार की बात करता है। स्त्री-पुरुष की समानता की बात करता है। समाज में लिंग भेद के कारण किए जाने वाले सभी तरह की असमता की बात करता है। और स्त्री के साथ किए जा रहे सभी तरह के गैरबरबारी को नकारता है। साथ ही स्त्री के साथ समाज का, स्त्री-पुरुष का, स्त्री-स्त्री का, स्त्री और रूढ़ियाँ का, स्त्री और समानता का, स्त्री के साथ न्याय और बराबरी का, स्त्री अस्मिता का, स्त्री के हक के साथ तमाम गैरबरबारी की बातों का चिंतन व विश्लेषण स्त्री नजरिएं या स्त्री की दृष्टि से करता है। उसके संबंधों को ले करके, उसके विचारों को ले करके, उसके रोक-टोक, परिधान को ले करके, उसकी स्वतंत्रता को ले करके, परिवार को ले करके, सामाजिक संस्थाओं को ले करके, सामाजिक मान्यताओं को ले करके जो विचार चिंतन व लेखन स्त्री को केंद्र में रख कर किया जा रहा है। उसे स्त्रीवादी लेखन, नारीवादी लेखन या स्त्री विमर्श कहते है। यही स्त्री विमर्श है। जिसके केंद्र में स्त्री के साथ वे सारी विषमताएं है जो उसके साथ समाज में स्थापित है। उसके मार्ग की बाधाएं है। जो उस पर सिकंजे की तरह कसे हुए है। स्त्री विमर्श समाज के द्वारा स्त्री पर थोपे

गए उन तमाम सिकंजों से अहवाहन की मुक्ति करता है। जो स्त्री व पुरुष के बीच किसी तरह की खाई खिचते है।

स्त्री विमर्श स्त्री को स्थापित करने का आंदोलन है। जिसमें आग्रह नहीं बल्कि उसके साथ किए जा रहे अन्याय का प्रतिकार है। उसका विरोध है। उसके प्रति विद्रोह है। यहाँ समझने की बात यह है कि यह समाज से विद्रोह नहीं है न व्यक्ति से है। बल्कि उस व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह है जिसमें यह सब अन्याय भरा हुआ है। जिस व्यवस्था में स्त्री पिसती रही, घुटती रही, अपने आप को खपाती रही है। गौर से देखे तो इस पर अस्तित्ववाद का स्पष्ट प्रभाव है। अस्तित्ववाद मनुष्य मात्र के अस्तित्व की बात करता है। स्त्री विमर्श में कहीं न कहीं स्त्री के एक सार्थक अस्तित्व की तलाश की बात की जाती है। अपने सत्ता की बात करती है। उसके अस्तित्व की बात की जाती है। साहित्य में यह लड़ाई सिर्फ स्त्रियाँ ही नहीं बल्कि पुरुष भी लड़ रहा है। वह भी उसके इस आंदोलन को आगे बढ़ रहा है। इस विचार को आगे बढ़ रहा है। और इसके साथ प्रतिबद्धता के साथ खड़ा हुआ नजर आता है। कमलेश्वर भी इस लड़ाई को इस आंदोलन को अपने तरह से मजबूत करते है। उसकी बात करते है। स्त्री जीवन कि समस्याओं पर बात करते है। और यही सब उनके साहित्य में स्त्री विमर्श का केंद्र है। या स्त्री विमर्श संबंधी सवाल इन्ही बीच में आ गए है। घर, परिवार व समाज की बात करते हुए स्त्री किस रूप में कहा आती है। या घर, परिवार व समाज में उसकी स्थिति-परिस्थिति क्या है। उसके कारक तत्त्व क्या है। उसमे स्त्री या पुरुष कौन कितना जिम्मेदार है। आदि बातें कमलेश्वर के साहित्य में स्त्री विमर्श की दृष्टि से बिखरी हुई है। कमलेश्वर अलग से या व्यक्तिगत स्त्री विमर्श पर कोई बात नहीं करते है। इसी बिखरी हुई विचारों को आधार बनाकर उनके साहित्य में स्त्री विमर्श का अध्ययन किया जा रहा है।

स्त्री विमर्श कितना भी बड़ा कितना भी विशाल क्यों न हो गया हो पर स्त्रियों के हालात में उतना बड़ा व विशाल सुधार अभी भी बड़ा मुश्किल है। बड़ा कठिन है। स्त्रियों की हालात में अभी भी

बहुत कुछ जस का तस ही है। उनकी हालात में अभी भी बहुत बड़ा परिवर्तन नहीं आ गया है। अभी बहुत कुछ बदलना बाकी है। अभी बहुत कुछ टूटना बाकी है। अभी बहुत थोड़ा का बदला है अभी बहुत बड़ा बदलना बाकी है। जिस दिन यह बदलाव अपनी पूर्णता में होगा उस दिन स्त्री विमर्श अपने पूर्णता पर होगा।

अन्य सामाजिक आंदोलनों की तरह स्त्री विमर्श भी एक सामाजिक आंदोलन है। यह सिर्फ स्त्रियों की लड़ाई नहीं है बल्कि यह समाज की लड़ाई है। इसे स्त्री व पुरुष दोनों को मिलकर लड़ना होगा। जैसे विधवा विवाह, सती प्रथा, बाल विवाह एक सामाजिक कुरीतियाँ थी। जिसके खिलाफ समाज लड़ा और उसे खत्म किया। उसी तरह से स्त्री विमर्श की लड़ाई एक सामाजिक लड़ाई है उसे सबको मिलकर लड़ना चाहिए। यह सिर्फ स्त्री की लड़ाई नहीं है। यह पूरे समाज की लड़ाई है।

साहित्य में आधुनिक काल विभिन्न विचारों, विमर्शों व आंदोलनों की जन्मभूमि, कर्मभूमि व पृष्ठभूमि रहा है। साहित्य में विमर्श एक आधुनिक समकालीन अवधारणा है। जिसमे सदियों से चले आ रहे दमन व शोषण के दुश्चक्र के प्रतिरोध में मुखर व प्रतिबद्ध आवाजें उठती है। और उसका विरोध दर्ज करती है। जिसमे सभी प्रकार की असमानता व गैर बराबरी के लिए संघर्ष जारी है। और इस संघर्ष में किसी न किसी रूप में आज पूरा विश्व हस्तक्षेप कर रहा है। विभिन्न विमर्श आज पूरे विश्व मे मान्य व स्थापित विचारधारा का रूप ले चुके है। हिंदी साहित्य में जितने भी विमर्श शुरू हुए है उन सब मे किसी न किसी रूप में समाज की किसी न किसी विसंगति से मुक्ति का स्वर सुनाई देता है। अनाचार, अत्याचार, अमानवीयता की आवाज इन विमर्शों में से निकालकर आती है। जो लोक में गूँजती है। लोगों के चेतना से टकराती है। सवाल करती है, प्रश्नचिन्ह खड़ा करती है।

स्त्री विमर्श स्त्रियों के साथ सदियों से बरते जा रहे अन्याय, अपमान, शोषण, गैरबराबरी के खिलाफ समता का आंदोलन है। जिसमे स्त्रियों के स्वतंत्रता, समानता, सुरक्षा, पद-प्रतिष्ठा, हक, मान-सम्मान, बराबरी व शोषण से मुक्ति की पक्षधरता की जाती है। जिसमें स्त्रियों के साथ सदियों से किये जा रहे अनाचार, अत्याचार के प्रतिरोध मे एक मुखर आवाज उठती है। किन्तु वैश्विक स्तर पर देखे तो यूरोपीय स्त्री विमर्श की शर्ते अलग है। भारतीय स्त्री विमर्श की अलग। कई स्तरों पर यूरोप व एशिया की संरचना भिन्न-भिन्न है। यह भिन्नता का भेद स्त्री विमर्श में में स्पष्ट रूप से दिखाता है। यहाँ हम विषय विस्तार से बचते हुए भारतीय स्त्री विमर्श के दृष्टिकोण को देखेंगे। भारतीय नारीवादी लेखन के दृष्टिकोण पर डॉ. के. एम. मालती लिखती है कि, “भारतीय नारीवादी दृष्टिकोण पितृसत्तात्मक समाज द्वारा स्थापित कई मूल्यों को चुनौती देता है। लेकिन मातृत्व, वात्सल्य और पारिवारिक रिश्तों नातों के मूल्यों का आदर करता है।”2

भारतीय में स्त्री विमर्श की एक मजबूत परंपरा रही है। स्त्रियों में समाज को चुनौती दी भी है और समाज के चुनौती को स्वीकार भी किया है। उससे लड़ी और उससे संघर्ष भी किया है। डॉ. के. एम. मालती कहती है कि, “भारतीय साहित्य में में स्त्री विमर्श की ओजस्वी स्वर बौद्धकालीन थेरिगाथा से निकलकर भक्ति आंदोलन के संदर्भ में आलवार भक्तों में अंडाल, बारहवीं सदी में कर्नाटक की अक्कमहादेवी, मराठी की महिला संत, मीराबाई, नवजागरण काल में पंडिता रमाबाई, ताराबाई शिंदे, सीमंतिनी उपदेश की अज्ञात हिन्दू औरत से होकर वर्तमान स्त्री मुक्ति आंदोलन तक अविराम गति से उछलती मचलती, पुरुष सत्ता के चट्टानों से टकराती अपना अलग रास्ता तय करती आयी है..।”3 इस तरह से देखे तो स्त्री विमर्श भारत में बहुत पहले से चला आ रहा है, किन्तु यह पितृसत्तात्मक परिवेश में मुखर नही हो पा रहा था। किन्तु संविधान द्वारा जब स्त्री-पुरुष दोनों को बराबरी का हक व अधिकार दिया, स्त्रियों में शिक्षा का प्रतिशत बढ़ा तो स्त्रियों की बात मुखर हो

कर सामने आयी। उसने लिखना पढ़ना शुरू किया और स्त्रियों को जागरूक किया। इस तरह से यह आंदोलन का रूप ग्रहण करता चलता है।

देश के बड़े नेताओं, महापुरुषों, समाजसुधारकों व समाज सुधारक संस्थाओं ने भी इस पर बहुत काम किया है। इस बात से इनकार नही किया जा सकता और न यह कहा जा सकता है की यह सिर्फ महिलाओं का विमर्श या सिर्फ इसमें महिला ही लिख रही है या उसका लिखा ही स्त्री विमर्श हो सकता है। इस पर स्त्री व पुरुष दोनों लिख रहे है। और स्त्रियों की जो समस्याएं है वे एक समाज की भी समस्याएं है। वे सामाजिक समस्याएं है। और उन समस्याओं से निजात की पहल करना स्त्री-पुरुष दोनों की जिम्मेवारी है। एक सामाजिक नागरिक होने के नाते, क्योंकि यह सिर्फ स्त्री या पुरुष की बात नहीं है, बल्कि स्त्री की समस्या के साथ यह एक समाज भी की समस्या है। स्वामी विवेकानंद जी ने स्त्री के जीवन में सुधार के परिप्रेक्ष में लिखते है कि, “सर्व प्रथम स्त्री जाति को सुशिक्षित बनाओं, फिर वे स्वयं कहेगी कि उन्हे किन सुधारों की आवश्यकता है। तुम्हें उनके प्रत्येक कार्य में हस्तक्षेप करने का क्या अधिकार है ?...स्त्री जाति के प्रश्न को हल करने के लिए आगे बढ़ने वाले तुम हो कौन ? क्या तुम हर एक विधवा, हर एक स्त्री के भाग्य विधाता साक्षात भगवान हो ? अलग हो जाओ। अपनी समस्या की पूर्ति वे स्वयं कर लेगी।”4

इसी तरह स्त्रियों के विषय में विचार व्यक्त करते राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी कहते है कि, “स्त्री पुरुष की साथिन है जिसकी बौद्धिक क्षमताएं पुरुष की बौद्धिक क्षमताओं से किसी तरह कम नहीं है। पुरुष की प्रवृत्तियों में, उन प्रवृत्तियों के प्रत्येक अंग और उपांग में भाग लेने का उसे अधिकार है और आजादी तथा स्वाधीनता का उसे उतना ही अधिकार है जितना पुरुष को है। जिस तरह पुरुष अपनी प्रवृत्ति के क्षेत्र में सर्वोच्च स्थान का अधिकारी माना गया है, उसी तरह स्त्री भी अपनी प्रवृत्ति के क्षेत्र में मानी जानी चाहिएं।”5

महादेवी वर्मा के विचार इस दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है वे कहती है कि, "स्त्री के विकास की चरम सीमा उसके मातृत्व में हो सकती है, परंतु यह कर्तव्य उसे अपनी मानसिक और शारीरिक शक्तियों को तोलकर स्वेच्छा से स्वीकार करना चाहिए, परवश हो कर नही।"6

इन विचारों को यदि हम देखे तो स्पष्ट है की स्त्री विमर्श स्त्रियों के ऊपर थोपे गए सामाजिक बेड़ियों को तोड़ने के साथ उसके अपने स्वतंत्र निर्णयों की बात करती है। स्त्री विमर्श की चिंताओं को देख कर ऐसा लगता है जैसे स्त्री की सिर्फ शरीर मिल गया है बाकी उसके ऊपर अधिकार व इच्छाएं किसी और की है। स्त्री विमर्श इसका विरोध करता है। इसे नकारता है। वह स्त्री के देह को स्त्री की देह स्त्री की देह ही मानता है। समाज की रूढ़ियां, झूठी परंपराएं जो स्त्री पर आभूषण की तरह लाद दी गई और बताया गया की यह कि स्त्री का अलंकरण है। इस अलंकरण रूप का स्त्री विमर्श विरोधी है। उसका विरोध करता है। यह अलंकरण नहीं बल्कि बेड़ियाँ है जिसके द्वारा उसका शोषण होता आया है। स्त्री विमर्श इसका विरोध करता है। स्त्री विमर्श उसके अपने इच्छाओं, भावनाओ की कद्र करता है। वह विचार कर सकती है, वह निर्णय ले सकती है, वह वह सब कर सकती है जो पुरुष कर सकता है। इसलिए वह कम और ज्यादा नही बल्कि बराबरी की बात करती है। स्वतंत्रता, समानता, अधिकार की बात करती है। अपने तन और मन पर अपना हक और अधिकार चाहती है। उच्छृंखलता के साथ नही बल्कि पूरे मान, मूल्य और मर्यादा के साथ अपने भावनाओं की कद्र करना चाहती है। यही स्त्री विमर्श की अवाज है। यही उसका विचार है।

स्त्री विमर्श ने समाज की स्त्री विरोधी रूढ़ियों को तोड़ है। इसमे कोई संदेह नही है। यही करण है कि इस लड़ाई के सकारात्मक प्रभाव भी आ रहे है समाज में। समाज की मानसिकता व रूढ़ियों में दरकने की कोमल शुरुआत हो चुकी है। जिसमें महिलाओं की सक्रियता के साथ पुरुषों की भी थोड़ी बहुत भूमिका मानी जा सकती है। इसके बावजूद भी आज हमारा समाज बंदिशों में बंधा स्त्रियों को उसी भाव से देखना चाहता है। जिस दृष्टि का वह सदियों से आदि रहा है। स्त्री-पुरुष के संबंधों

में स्त्री की भूमिका केंद्र में है पर उसको वह स्वीकृति नहीं मिली जो मिलनी चाहियें। यही कारण है है कि स्त्री-पुरुष के संबंधों में भी उसे केंद्र की बजाय इसे हाशिये पर रखा गया है। स्त्री विमर्श इसके खिलाफ है।

विमर्श हमेशा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं सामान्य व्यवहार के चलते ही उत्पन्न होता है। कोई भी विमर्श हो उसके केंद्र में एक विचार होता है। और यह विचार ही उसकी शक्ति है। और वह विचार बहुपक्षीय होता है। जिससे वह अपने दायरें में विमर्श की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, एवं सामान्य व्यवहारिक जीवन में उसके अलग-अलग पक्षों एवं महत्व को रेखांकित करते हुए समाज में उसकी भूमिका को रेखांकित करता है। समाज का उस विचार के साथ व्यवहार, तौर-तरीके, व्यावहारिक संबंध किस स्तर के व किस प्रकार के है। यह बात जब किसी विचार के रूप में आती है तब वहाँ विमर्श का रूप ले लेती है। सैद्धांतिक तौर पर स्त्री विमर्श की कुछ परिभाषाएं देख लेते है। जिसके द्वारा उसकी अवधारणा को हम और अधिक स्पष्ट कर सकते है।

स्त्री विमर्श की परिभाषा

किसी सामयिक या समकालीन वाद, आंदोलन या विमर्श को परिभाषित करना अपने आप में एक चुनौती है। क्यों कि ऐसे वादों या आंदोलनों की गति बदलती रहती है। उस पर बहस होती रहती है। उसमे नए आयाम, नए दृष्टिकोण जुडते रहते है। इस प्रकार से उन्हे पकड़ पाना और उन्हे परिभाषित करना अपने आप में एक चुनौती है। इसी बदलते स्वरूप के कारण कमलेश्वर ने नई कहानी के संदर्भ में कहा कि 'नयी कहानी परिभाषा का संकट पैदा करती है'। फिर भी विद्वानों ने उसे परिभाषित किया। इसी तरह स्त्री विमर्श जो पूरे विश्व में अपनी गतिशीलता बनाए हुए है। लगातार उस पर बहस चल रही हो। उसमें नए आयाम व दृष्टिकोण जुड़ रहे है। ऐसे में उसे कुछ

निश्चित सीमाओं में बाध कर उसे परिभाषित करना शायद उसे समझने की भूल होगी। या कुछ सही-सही उसके बारे में बोल पाना कठिन होगा। लेकिन इन लघु व दीर्घ विचारों के बावजूद भी सुधिजनों ने इस चुनौती को स्वीकार करते हुए इसे परिभाषित किया। जिसमें कुछ प्रमुख परिभाषाएं इस प्रकार है।

डॉ. करुणा शर्मा के अनुसार "स्त्री विमर्श वास्तव में महिला-उत्पीड़न के विभिन्न पहलुओं को समझने की दिशा में गतिशील और निरंतर परिवर्तित होने वाली विचारधारा हैं। जिसके मूल में एक विचार है कि, मौजूदा स्त्री-पुरुषों सम्बन्धो में बदलाव आए और स्त्रियों को भी स्वतंत्रता और समानता प्राप्त हो। स्त्री को मनुष्य समझा जाए, वस्तु नहीं। उसके अस्तित्व की सार्थक पहचान हो।"7

हिंदी साहित्य में स्त्रियों को लेकर एक विरोधाभास की स्थिति बनी हुए है, वह यह कि कहीं उसे देवी के रूप में तो कहीं उसे माया के रूप में लिखा, पढ़ा और बताया जाता रहा है। यह अपना-अपना दृष्टिकोण हो सकता है कि वह किसी को देवी तो किसी को माया लगी हो। पर स्त्री वास्तव में वह उर्वरभूमि हैं जिस पर यह सृष्टि पुष्पित व पल्लवित होती रही है और होती रहेगी। सृजन का बीज उसी में है। वह सृजनधर्मा है। उसके सृजन से ही यह सृष्टि है। स्त्री ममता, करुणा का अथाह भंडार है। जिसकी गहराइयों को समझ पाना आसान नही है। हिन्दी साहित्य में स्त्री को करुणा, देवी, माया, बेचारी आदि रूपों में चित्रित किया है।

मृणाल पांडेय के अनुसार "अगर विचार करना है तो स्त्री के संदर्भ में नही, शक्ति के संबंध मे भी विचार करना होगा। क्यों कि मूलतः जो पीड़ा है वह शक्ति के असन्तुलित वितरण से उपजी विभिन्न प्रकार की विसंगतियों एवं कोष्टो को लेकर है। नारी-विमर्श इन सभी विचारधाराओं को

लेकर चलता है। इसमें स्त्री की आजादी, स्वायत्तता, आत्मनिर्भरता, अस्मिता, स्वचेतना, संघर्ष, विरोध तथा विद्रोह की बात की जाती हैं।"8

दीपेंद्र सिंह बघेला के अनुसार "स्त्री-विमर्श में स्त्री आकांक्षा, आजादी, स्वायत्तता, पितृसत्तात्मकता, परिवार संरचना, विज्ञान, प्रौद्योगिकी और कानूनों में विन्यस्त पुरुषवाद पर गहरा विचार हुआ हैं। नारीवाद एक स्वस्थ दृष्टिकोण हैं जो एकांगी नही हैं...यह पुरुष को नही उनकी मानसिकता हटानेवाली उस छद्म मुखौटे का प्रतिकार हैं, जो मर्दानगी के नाम पर गढ़ा गया हैं।"9

राजेन्द्र यादव के अनुसार "स्त्री हमारा अंश और विस्तार है। वह हमारी ऐसी जन्मभूमि हैं जिसे हमने अपना उपनिवेश बना लिया है। हमारी सोच और संस्कृति के सारे सामंती और साम्राज्यवादी मूल्य उपनिवेशों के आधिपत्य और शोषण को जायज ठहराने की मानसिकता से पैदा होते हैं। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में दुनिया भर में जो उपनिवेश भौतिक और मानसिक रूप से स्वतंत्र हुए उनमे स्त्री नाम का उपनिवेश भी है। दलित हमारे घरों के बाहर होता है। स्त्री हमारे भीतर है, इसलिए उसका संघर्ष ज्यादा जटिल है।”10

मृदुला गर्ग के अनुसार "मैं समझती हूँ कि फेमिनिज्म का मतलब नारीमुक्ति नही, सोच की मुक्ति है। वर्तमान समय मे नारी-विमर्श को एक शस्त्र के रूप में भी अपनाया जा रहा है।"11

मृणाल पांडेय के अनुसार "नारी विमर्श कतई स्त्रियों को वृहत्तर समाज से अलग-अलग रखकर देखने और हर क्षेत्र में पुरूषों के खिलाफ उन्हें प्रोत्साहित करने का दर्शन नही है, यह तो एक समग्र दृष्टिकोण है।"12

मृणाल पांडेय "आज नारीवाद हमारे यहाँ एक अपरिचित या त्याज्य दृष्टिकोण नही बल्कि एक सार्थक स्वीकृति समग्र दर्शन के रूप में स्वीकार्य हो चला है। नारी विमर्श पितृसत्ता के हिसंक

व्यवहार, प्रहार, दुर्व्यवहार करनेवाली मानसिकता पर विचार करता हैं। नारी विमर्श पूर्णतः एक व्यक्तिगत विमर्श है।"13

हिन्दी साहित्य में स्त्रियों का लेखन भी एक तरह से संघर्ष का लेखन है। इस कड़ी में यदि देखना चाहे तो मीराबाई, महादेवी वर्मा, सुभद्राकुमारी चौहान यह छायावाद के आसपास तक की तस्वीर है। उसके बाद सप्तकों में दूसरे सप्तक में शकुंत माथुर व तीसरे में कीर्ति चौधरी दिखलाई पड़ती है। यानी बीसवीं शताब्दी के छठवें दशक तक महिला लेखिकाओ की बहुत संख्या नहीं है। लेकिन इनकी आवाज बड़ी बुलंद है। इनके लेखन में ताप बहुत है। उसमे तेज व आंच बहुत है। और देखे तो वे विद्रोह करके ही लेखिका बनी है। और उसके लेखन में वह विचार संचित है। जो स्त्रियों के पक्ष में हौसले का काम करते है। जिसके द्वारा वह पितृसतात्मक समाज में प्रताड़ित हुई। और उनसे मुक्ति का अहवाहन इनका लेखन करता है। महिलाओं को सशक्त महिला बनाने की दिशा ये यह सब प्रथम प्रयास थे। जिसकी अगुवाई मीराबाई, महादेवी वर्मा व सुभद्राकुमारी चौहान जैसे महिला लेखिकाएं करती है। महिलाओं को लेकर समाज में कई तरह के अनर्गल वार्ताएं भी प्रचलित व प्रचारित रही है। कुछ मिथक में बना दिए गए। यानि वार्ताओं व मिथकों में उसे लपेट कर रखा गया। उसे वहाँ से बच निकलने या भागने का कहीं से कोई सुराक नहीं है। लेकिन इन सबके सामने महिलायें डटी हुई है। अपनी बात रख रही है। यह स्त्री विमर्श की शक्ति है। यह उसका साहस है।

स्त्री विमर्श से जुड़े हुए साहित्यकारों ने जो सवाल उठायें है वे वाजिब सवाल है। क्या जिसे हम देवी व लक्ष्मी कहते है उसे समानता, स्वतंत्रता, मुक्ति का अधिकार नहीं दे सकते। क्या एक स्त्री को अपने जीवन को अपने हिसाब से जीने का अधिकार नहीं है। जब पूरा विश्व नागरिक,स्वतंत्रता, समानता की बात कर रहा हो, और मानवाधिकार आयोग जैसी वैश्विक संस्थाएं हो तो वहाँ नागरिक

असमानता की बातें कितनी हद तक सही है या गलत यह समझना चाहिए। दुनिया के हर हिस्से में बदलाव हो रहा है।

स्त्री विमर्श लेखन पर कभी-कभी यह आरोप लगाया जाता है कि इस लिखने वाले अपनी सीमाओं का अतिक्रमण कर जाते है। स्त्री विमर्श की सीमाएं भूल जाते हैं। और उसका गलत इस्तेमाल भी करते हुए मिले है या उनका लेखन उस सीमा तक पहुच गया है जहाँ स्त्री विमर्श की सीमा नही है। कई बार सही बात भी गलत तरीके से पेश कर दी जाती तो कई बार गलत चीजें भी बहुत सही ढंग से पेश कर दी जाती है। पर जो गलत वह गलत और जो सही है वह सही होता है। स्त्री विमर्श जिन मुद्दों पर, जिन विषयों को लेकर लिखा जा रहा है वे सब स्त्री जीवन के स्तर को समाज के सामने समानता के स्तर पर लाना है लेकिन यदि वह अपनी सीमाओं का अतिक्रमण कर रहा है तो इस पर यही कहाँ जा सकता है कि यह सीमा व्यक्तिगत कुंठाओ की सीमा हो सकती है, व्यक्तिगत ईर्ष्या द्वेष की सीमा हो सकती है पर वह स्त्री विमर्श की सीमा नहीं है। और अगर ऐसा है तो इसे स्त्री विमर्श के इस्तेमाल का एक कमजोर पक्ष कहा जायेगा। इस पर डॉ. विनय कुमार पाठक ने लिखा है कि "आज का नारी लेखन हमारी मानसिक तुष्टि के लिए एक विस्फोटक द्रव के समान है। हमारी शांति को भंग करने वाला और कष्टदायक। यह हमारी प्राचीन मान्यताओं और मानसिक जड़ता को गति देनेवाले एक ऐसा विध्वंसक शक्ति के रूप में प्रकट हुआ है जो हमे फिर से नये निर्माण के लिए प्रेरित करता है।"14 अब उसे विस्फोटक, शांति भंग करने वाला और कष्टदायक कहना अपने आप में समीक्षा का विषय है। मेरी दृष्टि में स्त्री विमर्श का मसला समाज का मसला है। उस पर पूरे समाज को सचेत होकर सोचना चाहिए। और सही दिशा में कदम रखने चाहिए। ताकि इस तरह के आरोप-प्रत्यारोप से उसे न गुजरना पड़े क्योंकि स्त्री विमर्श समाज के आधे हिस्से का विमर्श है। और उसकी बातें हवा में नहीं है बल्कि सामाजिक यथार्थ की बातें है। और इसके गलत इस्तेमाल व इसके गलत प्रभाव से भी बचना चाहिए। विचार

का इस्तेमाल बदलाव के लिए होना चाहिए। विचार का इस्तेमाल उत्पीड़न के पक्ष में नहीं होना चाहिए। उत्पीड़न का पक्ष विचार पक्ष को कमजोर करता है सो उससे बचना चाहिए।

विमर्शों के संदर्भ में एक और बात की अक्सर चर्चा की जाती है। वह है स्वानुभूति व सहानभूति। विमर्श के संदर्भ में यह एक प्रमुख सवाल बन गया है। इस पर बहसे भी हुई है। जिसमें यही बात अक्सर आती है कि विमर्श स्वानुभूति का विषय है सहानभूति का नहीं। इस बात को न तो पूरी तरह से सही ठहराया जा सकता है और न ही पूरी तरह से इसे खारिज ही किया जा सकता है। यह बात माध्यम मार्ग की बात हो सकती है। क्योंकि स्त्री विमर्श का लेखन पुरुषों द्वारा प्रचुर मात्रा में किया जा रहा है। और गंभीर किया जा रहा है। और विमर्श पर गंभीर मुद्दों को उठा रहे है। हा यह होता है कि कुछ संदर्भों में स्त्रीपन की अनुभूतियों की वह तीव्रता या वह स्पर्श, या वह आधार पुरुष नहीं प्राप्त कर सकता है जो एक स्त्री कर सकती है। यह पुरुषों द्वारा लिखित स्त्री विमर्श का एक कमजोर कोना हो सकता है पर स्त्री जीवन से जुड़े तीखे व पैने सवाल वह खड़ा कर सकता है। भले ही वह सहानभूति के ही स्तर पर क्यों न हो। कई बार इससे आगे बढ़कर स्त्री जीवन के समस्याओं के रूप में उन सवालों की अपनी महत्ता होती है। और स्त्री विमर्श मे यह काम राजेन्द्र यादव ने बखूबी किया है। किसी पुरुष के द्वारा लिखित स्त्री विमर्श में वह तीव्रता व वह गहरी व विविध आयामो वाली अनुभूति नही समाहित हो सकती है। जो एक स्त्री के लेखन में हो सकता है। कारण यह है कि किसी बात को देख-सुनकर महसूस करना और उस बात को जीना दोनों में जमीन-आसमान का फर्क है। जो महसूस कर लिखा जाएगा उसमे अनुभव व अनुभूति की वह प्रामाणिकता नही होगी जो सहकर लिखा गया होगा। इस कारण किसी पुरुष का स्त्री विमर्श का लेखन सिर्फ उसके गहरी संवेदना के महसूस का लेखन हो सकता है। उसके समस्याओं के स्पर्श का लेखन हो सकता है जबकि किसी स्त्री का स्त्री विमर्श पर लेखन महसूस व भोगा हुआ दोनों

हो सकता है। जिस कारण वह ज्यादे तीव्र, सघन, संवेदनाओं वाला, गंभीर, प्रामाणिक व ताप वाला होता है।

अवधारणा के रूप में स्त्री विमर्श की शुरुआत पश्चात की देन है। ऐसा विद्वानों का मानना है। लेकिन भारत के संदर्भ में भारतीय समाज में भारतीय ज्ञान-विज्ञान की परंपरा में स्त्रियों की बराबर की भागीदारी रही है। वह अपनी सामर्थ्य व शक्ति के आधार पर अपने आप को स्थापित करती रही है। वह चाहे प्राचीन काल हो, मध्यकाल हो या आधुनिक काल हो सब मे वह स्वंय को स्थापित किया है। अपने सामर्थ्य को सिद्ध करके दिखाया है। यही कारण है कि भारतीय समाज एवं इसकी परंपराओं में स्त्री को देवी या शक्ति के रूप में इसकी उपासना एवं स्थापना की गई है। और आज भी यह मान्यताएं है की हम उसे शक्ति के रूप में ही देखते है। यह भारत का अपना सांस्कृतिक दृष्टिकोण है। जीवन दृष्टि है। सामाजिक दृष्टिकोण है। कि उसे हम दिव्य शक्ति के रूप में पूजते है। इस शक्ति स्वरूपा आराधना व उपासना के बावजूद भी यदि भारत में स्त्री विमर्श का लेखन हो रहा है। तो कुछ न कुछ सामाजिक विसंगतियाँ सामाजिक अवरोध व स्त्रियों के जीवन मे कही न कही कुछ न कुछ कमी जरूर खली होगी और तब जाकर उसे प्राप्त करने के लिए उसने सवाल उठाए प्रश्न करने शुरू कर दिए। इन प्रश्नों में भारतीय सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्यों पर विशेष जोर स्त्रियों ने दिया। जिसमें सर्वाधिक जोर उनका भारतीय समाज के पितृसत्तात्मक व्यवस्था पर है। जिसे उन्होंने कारण स्वरूप माना कि पितृसत्तात्मक व्यवस्था ही वह केंद्र हैं जहाँ उनको गढ़ा जाता है, कमजोर किया जाता है, असहाय, बेचारी, बलहीन, श्रमहीन स्त्री के रूप में तैयार किया जाता है। और जितनी तरह की उनके साथ असमानताएं हो सकती है वे सब यहीं से शुरू होती है। वैसे भी जिस पेड़ की जड़ बहुत कमजोर होगी उसमे बहुत अच्छा वृक्ष तैयार नहीं हो सकता है। इस कारण भारतीय अवधारणा में स्त्री विमर्श पितृसत्तात्मक व्यवस्था में पुरुषों में ही समाहित समस्त शक्ति को खंडित करती है। उसके प्रति विद्रोह करती है। उन शक्ति वलय को तोड़ने की

बात करती है। और उन उसमे बराबर का प्रतिनिधित्व चाहती है। इस प्रकार भारतीय स्त्री विमर्श पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्रियों को लेकर जो विसंगतियां है, पितृसत्तात्मक समाज में स्त्रियों को लेकर जो विरोधाभास है, उस विरोधाभास के खिलाफ स्त्री विमर्श की लड़ाई है, उन विसंगतियों के खिलाफ लड़ाई है जो पितृसत्ता के द्वारा स्त्रियों के विरुद्ध रच दी गयी है। उन अवरोधों के तोड़ने की लड़ाई ही स्त्री विमर्श की भारतीय अवधारणा है। स्त्री विमर्श अपने इस मकशद में बहुत कुछ कामयाब भी हुआ है। स्थितियाँ पहले की अपेक्षा सुधरी है पर उस स्तर पर सुधार नहीं हुआ है जिस स्तर पर होना चाहिए। निश्चय ही निकट भविष्य या दूर भविष्य में यह बदलाव पूरी तरह से हो कर रहेगा। ऐसी अश्वस्ती है। पर इसके साथ इतना यह भी कहाँ जा सकता है की इसकी राह अभी बहुत आसान नहीं अभी बहुत कठिन है। रास्ता अभी बहुत लंबा और मंजिल अभी बहुत दूर है।

यदि हम स्त्री संबंधी हिन्दी साहित्य में विचारों की बात करे तो भक्ति कालीन कवियों के विचार महत्त्वपूर्ण है और वही से फिर आगे सरियों पर कहा जाता रहा है। कुछ प्रमुख स्त्री संबंधी विचार इस तरह से है।

कबीरदास

नारी नसावै तीनी सुख, जो नर पासे होई।

भगती मुकुति निज ग्यान में, पैसि न सकल कोई।।

गोस्वामी तुलसीदास

कत विधि सृजि नारि जग महीं। पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं।।

मैथिलीशरण गुप्त

अबला जीवन हाय तुम्हरी यही कहानी,

आँचल में है दूध और आँखों मे पानी।

जय शंकर प्रसाद

नारी तुम केवल श्रद्धा हो

विश्वास रजत नग पग तल में,

पीयूष स्रोत सी बहा करो

जीवन के सुंदर समतल में।

महादेवी वर्मा

मैं नीर भरी दुख की बदली

विस्तृत नभ का कोई कोना

मेरा न कभी अपना होगा

परिचय इतना इतिहास यही

उमड़ी कल थी मिट आज चली।

यह कुछ अत्यंत महत्त्वपूर्ण कथन है हिन्दी साहित्य में स्त्री संबंधी। इससे भी स्त्री संबंधी एक विचारधारा का निर्माण होता है। हमारे कवियों महकवियों णे स्त्री को किस रूप में याद किया है। और स्वाभाविक सी बात है कि साहित्य समाज का दर्पण है तो समाज में जैसी मान्यताए रही है किस कालखंड में उसमे उसी नजरिए से उसे प्रस्तुत किया गया है। इन मतों में ध्यान देने की

बात यह है की जो मत कवियों के है उसके दृष्टिकोण कैसे है और वही एक स्त्री जब अपने जीवन के बारे में लिखती है तो कैसे लिखती है। वह भी नारी जीवन ही है और वह नारी जीवन को भोग रही है। यह सबका सब अलग-अलग समय में स्त्रियों के प्रति प्रकट किए गए कथन है। हर बातें सैद्धांतिक ही नहीं होती कुछ बातों को हमें व्यवहार में भी देखना चाहिए। और व्यावहारिक रूप से आज भी हम देखे तो स्त्रियों की स्थिति को कोई सुधार नहीं हुआ है। जिस समाज में छोटी बच्चियों से लेकर महिलाओं तक के बलात्कार हो रहे हो, स्त्रियाँ सुरक्षित न हो, पकड़ो के पहनावे से डरती हो, बाहर अकेले निकालने में भय खाती हो, या कहीं भी स्त्री समझकर उसे दलील दी जाती हो। यह सब बातें यह प्रूफ करती है कि समाज का रवैया स्त्री के प्रति क्या है। इस तरह का डर भय स्त्री के मन में क्यों है। क्योंकि इस तरह की चीजें समाज में है। इन सबसे पता लगता है की स्त्री की दशा क्या है। और स्त्रियों के प्रति हमारा दृष्टिकोण कैसा रहा है। हमारा बर्ताव कैसा रहा है।

कमलेश्वर के उपन्यासों में चित्रित नारी का स्वरूप

हिन्दी साहित्य में संयुक्त रूप से जिन मुद्दों को प्रेमचंद अपने साहित्य में उठाते है। कालांतर में वही सारे मुद्दे स्वतंत्र विमर्श के रूप में हमारे सामने आते है। यानि जैसे कोई उपन्यास है उसमें स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, किसान विमर्श आदि की विषयों पर प्रेमचंद बात करते है। और आज ए सबके सब एक स्वतंत्र धारा के रूप में है। इन पर अलग से पूरा का पूरा साहित्य ही लिखा जा रहा है। बहरहाल स्त्री विमर्श में स्वतंत्र विषय के रूप में में जिन मुद्दों पर बात की जाती है। जिन प्रश्नों को उठाया जाता है। जो सवाल खड़े किए जाते है। कमलेश्वर भी अपने उपन्यास साहित्य में उन प्रश्नों को उठाया है। स्त्री की समस्याओं को, उसके साथ किए जाने वाले शोषण, अन्याय, असमानता, अत्याचार, भेदभाव इत्यादि सवालों को कमलेश्वर जी अपने उपन्यासों में उठाते है।

यह उनकी एक प्रगतिशील चेतना भी है कि वे स्त्री-पुरुष के किसी प्रकार के गैरबरबारी के भेद को नहीं मानते। इसकी वे घोर विरोधी व समता, समानता के प्रबल पैरोकार है। यह बात उनके जीवन व उनके लेखन दोनों से सिध्द होती है। स्त्रियों को लेकर उनके विचार बिल्कुल स्पष्ट है। वे स्त्रियों के पक्ष की बात करते है। उसके हक, अधिकार, सम्मान, स्वतंत्रता, बराबरी की बात करते है। उसकी समस्याओं पर बात करते है। स्त्री विमर्श की दृष्टि से उनके उपन्यासों में आयी बातों का हम बिन्दुवार अध्ययन करेगे जो इस प्रकार है।

स्वाभिमान व प्रेम की मूर्ति स्त्री

किसी भी समाज में स्त्री का क्रय-विक्रय स्त्रियों की दुर्दशा को ही दर्शाता है। कमलेश्वर का पहला उपन्यास एक सड़क सत्तावन गालियां है। जिसमें स्त्री पात्र के रूप में बंसिरी मुख्य पात्र है। पर जैसे समाज के अनाचार, अत्याचार को भोगना स्त्री जीवन का एक यथार्थ है। बंसिरी भी पुरुषों के क्रूर व्यवस्था में फसी हुई है। और यह व्यवस्था उसे बाजार की औरत बना कर रख देता है। किन्तु बंसिरी इस अपमान, इस छल-छद्म को चुपचाप सह लेने वाली स्त्री नहीं है। वह इसे एक चुनौती की तरह लेती है। और उसके अपने स्वाभिमान के साथ सरनाम द्वारा किया गया व्यवहार को वह छल मानती है। और वह है भी छल। तब वह सरनाम को चुनौती के स्वर में कहती है कि “अपने को बड़ा अफलातून समझता है सरनाम ! बेईमान...दगाबाज... इज्जत से खेल गया कमीना ?... औरत पुकारता था, जैसे उसकी कभी कुछ भी नहीं रही !...अभी जानता नहीं औरत कितनी खूँखार होती है ? अब औरत बन के रहेगी और एक दिन देखेगी उसे... बताएगी उसे कि वह सिर्फ औरत नहीं है !...वह सरनाम को सिखाएगी, उसे एक सबक देगी..।”15 यह प्रतिरोध यह स्वाभिमान एक ऐसी स्त्री का स्वाभिमान व प्रतिज्ञा है जो पुरुष सत्ता के चंगुल में शिकारी की तरह फसी हुई है। स्त्रियों द्वारा किया जाने वाला यह प्रतिकार अक्सर पुरुष को स्वीकार नहीं होता है। ऐसी बातें सुनने पर पुरुष स्वयं को अपमानित महसूस करता है। और वह बदले की भावना में जलने लगता

है। सरनाम के साथ भी यह होता है। वह बंसिरी के इस प्रतिकार को स्वीकार नहीं कर पाता है। पर बंसिरी अपने क्रोध में सरनाम के प्रति जितना जलती है पर क्रोध शांत होने पर उतना ही अफसोस करती है। और प्रतिद्वंद्व से बध जाती है। तब वह कहती है कि "कैसे लड़ेगी वह उससे ! मन क्यों डूब-डूब जाता है- उस पत्थर के शरीर को संभालने का मन होता है, बनाए रखने को जी करता है ! उसे छूए, उस पर हाथ पटके और चट्टानी साइन के नीचे दबकर मर जाए...।"16 एक तरफ जहाँ आग में जलती हुई कठोर बंसिरी वही दूसरी तरफ प्रेम में पिघली हुई कोमल बंसिरी। इसे हम स्त्री का दो रूप भी कह सकते है। यह सच है कि स्त्री-पुरुष की पूरक होती है। लेकिन समाज में स्त्री-पुरुष के लिए अक्सर उसके भोग की वस्तु बनकर रह जाती है। वह अपने जीवन का निर्णय नहीं ले पाती है।

स्त्री व्यापार

समाज का एक सच यह भी है कि महिलाओं की खरीद फ़रोश आज भी होती है। देश के एक हिस्से से दूसरे हिस्से में यह सब होता है। एक सड़क सत्तावन गालियां उपन्यास में बंसिरि को भी एक वस्तु की तरह बेचा जा रहा है। वस्तु की तरह उसका मोलाभव होता है। यह क्रय-विक्रय बताता है कि स्त्री की दशा क्या है। निश्चित तौर पर बेची हुई स्त्री पुरुष पशुता का ही शिकार होती है। इस बेची हुई स्त्री क्या होगी ? यह बड़ा सवाल है। अपने आप को सभ्य व शिक्षित समाज में सवाल है। बंसिरि का मोलभाव करते हुए गेंदाकवि कहता है कि "खतरा नहीं हैण सिंघजी, मन से आई है। इसमें व्योपार की बात नहीं, असलियत है। किसी भी तरह का झगड़ा-टंटा नहीं, मन माफिक रखिए...सुंदरपन के लिए, क्या पूछना, अहा हा...देख भर लें सिंघजी, किस्मत की बात है जो इस तरह आ गई ! ठाकुर जमींदार के ही लायक है सिंघजी, लेकिन सबसे ऊपर पैसे का जोर चलेगा। मैं खुद ऐरे-गैरे के हाथ नहीं देना चाहता, आप ही अपने चरणों में डाल लें..उद्धार हो जाए विचारी का !"17 कितनी विडंबना की बात है कि एक बेची हुई स्त्री का उद्धार करने की बात की

जा रही है। इससे ज्यादा स्त्री का उपहास क्या हो सकता है। यह वही देवी व लक्ष्मी है जिसकी हम पूज़ा करते है। और दूसरी तरफ वह इतनी कमजोर है की उसे बेचकर उसका उद्धार किया जा रहा है। यह समाज पर कमलेश्वर का व्यंग्य भी है।

उपन्यास में सरनाम स्त्रियों को लेकर कबीरपंथियों या नाथों की तरह विचार रखता है। उसका मानना है की स्त्रियाँ ही सारे प्रकार के कष्टों का कारण है। सरनामसिंह शिवराज को हमेशा हिदायत देता है कि “औरत से बड़ी खाई इस दुनियाँ में नहीं। आम की तरह चूस लेती है। आदमी वही है जो औरत से अपने को बचा जाए ! कभी उसके फंदे में न फसे। अपनी जिंदगी जीना हो तो औरत को कोसों दूर रख...तन-बदन, धन-दौलत, ऐश-आराम की दुश्मन है औरत ! फिर ऐसा क्या है जो पैसे से नहीं मिलता...।”18 यहाँ भी जो बात कहीं गई है उसमे एक बीएसई विडंबनापूर्ण बात है और वह यह कि फिर ऐसा क्या है जो पैसे से नहीं मिलता। मतलब तो यही हुआ की आखिर पैसे से तो स्त्री भी मिल जाती है। ऐसे सोच रखने वाले समाज में स्त्री का आर्थिक रूप से स्वतंत्र होना कितना जरूरी है। इस बात को हम सरनाम के इस विचारों से समझ सकते है।

निर्णय लेने की क्षमता

कमलेश्वर की स्त्री पात्र अपने सही-गलत का निर्णय लेने में सक्षम है। वह किसी ही हाल में अपने रास्ते का चयन करती है। अपने जीवन का निर्माण करती है। अपने जीवन के सुख-दुख से लड़ती है। एक सड़क सत्तावन गालियां की बंसिरि कहती “तेरा ए ताज जिस दिन गिरेगा, उसी दिन को देखने के लिए जिंदा हूँ। औरत कहता है न मुझे। तेरे कारन औरत हुई...नहीं तो किसी की घरवाली होकर चैन से मर जाती। तू अपनी समझ से घरवाली बनाया है न, पर तेरे लिए औरत रहूँगी..औरत..।” 19 डाक बंगला में विमल जब इरा को अकेला छोड़कर चला गया तो इरा भी अपने निर्णय लेने लगी। और दुख भरी ही सही लेकिन अपने जीवन को जीती है। तीसरा आदमी उपन्यास में चित्रा

को दो बच्चों के साथ दिल्ली में अकेले छोड़कर नरेश पटना चला जाता है। और जैसे अपनी जिम्मेदारियों से मुक्त हो गया हो। पर चित्रा दोनों बच्चों को लेकर अध्यापक की नौकरी करते हुए अपना जीवन बिताती है। काली आंधी की मालती एकदृढ़ इच्छा शक्ति वाली महिला है। वह राजनीति में आती है। और एक के बाद एक चुनाव जीतती है। और लगातार निर्णय लेती चली जाती है। एक बार जो निर्णय लिया फिर पीछे मुड़कर कभी नहीं देखा। इसमे उनका परिवार भाले ही छूट जाता है। यानि कमलेश्वर की महिला पात्र संवेदनशील है, भाऊक है लेकिन साथ ही वह निर्णय लेने में भी सक्षम है।

स्त्रियों के प्रति पुरुष मानसिकता

कमलेश्वर अपने उपन्यासों में बार-बार यह बताने की कोशिश की है कि स्त्री के प्रति पुरुष की मानसिकता एक जैसी ही होती है। और यह बात वे लगातार अपने उपन्यासों मे दोहराते रहे है। जैसे बंसिरि के प्रति सरनाम का व्यवहार। बंसिरि सरनाम को अपना सर्वस्व मानती है लेकिन सरनाम उसका सौदा करा देता है। यानि वह बेची जाती है। रँगीले के हाथों। तीसरा आदमी में नरेश का चित्रा के प्रति रुख लगातार बिगड़ता चला जाता है। और चित्रा को गर्भावस्था में वह छोड़कर भोपाल चला जाता है। और वापस आता है लेकिन उसका स्वभाव नहीं बदलता है और फिर दूसरी बार भी नरेश चित्रा को गर्भावस्था में छोड़कर पटना चला जाता है। अंततः नरेश चित्रा को बदले की भावना में पशुता की ओर बढ़ता चला जाता है। डाक बंगाल की इरा को विमल छोड़कर लापता हो जाता है। यानि स्त्री को पुरुष अपनाना तो चाहता है लेकिन जीवन हारता हुआ देख कर वह स्त्री को असहाय छोड़कर निकाल जाता है। कई बार तो इन सबको लेकर भयकर कलह की स्थिति होती है। जैसा कि चित्रा व नरेश के मध्य है भी।

पुरुष के व्यवहार से परेशान स्त्री

तीसरा आदमी व डाक बंगाल उपन्यास इस कथ्य पर आधारित उपन्यास है। तीसरा आदमी उपन्यास का नरेश चित्रा के ऊपर शक करता है। और यह लगातार उसका शक बढ़ता चला जाता है। और अंत में दोनों के संबंधों का अंत हो जाता है। “आज वे सब संशय उभर-उभरकर आते है। मुझे लगता है कि जिन बातों को मैं अपने मन की क्षुद्रताएं समझकर मुंह पर ताला लगा लेता था। संशय भीतर से काटते हैण और धीरे-धीरे शंकाओं में बदल जाते है।”20 इसी तरह डाक बंगाल का विमल आर्थिक तंगी के चलते इरा को बतरा के यहा नौकरी पर लगा देता है, लेकिन धीरे-धीरे उसके मन में इरा के प्रति शक होने लगता है और अंततः एक दिन विमल चुपचाप इरा को छोड़कर कहीं भाग जाता है।“दिन-ब-दिन उसका मन शंकालु होता जा रहा था। अब वह बड़ी मुश्किल से किसी भी बात को सच मान पाता था। विमल जैसा आँख मूंदकर बात माँ लेने वाला आदमी अब खुली आँखों देखते हुए भी किसी बात पर एकदम वईश्वर करने को तैयार नहीं होता था।...बतरा के बंगले के आस-पास वह चक्कर काटता, और मुझसे अपने मन के चोर को छिपाता था।”21 इरा के साथ दूसरा छल बतरा करता है। इरा के साथ बतरा कपट करता है। इरा को जब विमल छोड़कर चला जाता है तो इरा बतरा के यहाँ ही रहने लगती है और धीरे-धीरे वह बतरा की पत्नी की तरह हो जाता है। और इरा के पेट में बच्चा पलता है। यह जानकार इरा के खुशी का ठिकाना नहीं रह जाता है लेकिन बतरा इसे स्वीकार नहीं करता है। और इरा के स्वास्थ्य का हवाला देते हुए उसे गर्भपात की गोलियां खिला देता है। किसी स्त्री का मातृत्व बिना उसकी मर्जी के छीनना यह पुरुष तानाशाही नहीं तो और क्या है। यह स्त्री पर अत्याचार नहीं तो और क्या है।

बेचारगी से मुक्त

कमलेश्वर ने अपने स्त्री पात्रो को बेचारगी से मुक्त रखा है। इनके उपन्यासों में जितनी स्त्री पात्र है वे कही से अपने प्रति बेचारगी का भाव नहीं रखती है। वे अपना निर्णय लेती है। और उनके जीवन में जो सुख-दुख आता है उसे वह स्वयं सहती है। वह किसी क्षण मजबूर हो सकती है पर

वह बेचारी नहीं है। वह किसी की दया पर जीना नहीं चाहती है। अपने जीवन का रास्ता चुनती है और उसी पर आगे बढ़ती है। एक सड़क सत्तावन गालियां उपन्यास की बंसिरि हो या लौटे हुए मुसाफिर की नसीबन, तीसरा आदमी की चित्रा, डाक बंगला की इरा, काली आंधी की मालती, वही बात की समीरा सभी स्त्रियाँ किसी न किसी स्तर पर अपने जीवन का निर्णय लेती है और बिना किसी की दया के अपने जीवन का यापन शुरू करती है। अपने निर्णय वह लेनी है।चित्रा नरेश से कहती है कि "मैं जानती हूँ कि मुझे पहले जैसे हालत में छोड़कर फिर भाग जाओगे...तुम वही करोगे, तुम्हारे पास और रास्ता नहीं है...हो न हो, पर मैं इतनी बेचारी नहीं हूँ, जितनी तुम समझ रहे हो।"22

सशक्त व स्वाभिमान विचारों वाली स्त्रियाँ

कमलेश्वर अपने उपन्यासों में स्त्री पत्रों को कभी भी कमजोर नहीं किया है। स्त्री पत्र उनके अपने तेवर से एकदम चमकदार है। उनमे विचार शक्ति बड़ी प्रखर है। अपने सूझबूझ से वे अपने निर्णय लेती है। पुरुष प्रधान समाज में स्त्री द्वारा निर्णित विचार व कार्य करने में बड़ी मुश्किल होती है। क्यों की यह उनको छूट नहीं है की वह अपने भविष्य के निर्णय या अपने जीवन का निर्णय कर सके। वह घर से लेकर बाहर हर जगह संघर्ष करती है। वह अपने संघर्ष से ही अपनी पहचान बनती है। अपने हौसले बढ़ाती है। समीरा प्रशांत से कहती है कि "मुझे तय करने दो। इतना बड़ा बंगला है। इसमें रहना मुझे पड़ता हैं। तुम तो सिर्फ आते-जाते हो। जहां-जहां मेरा मन होगा वहाँ लगाऊँगी...तुम चाहते हो कि मैं तुम्हें समझूँ...मैं चाहती हूँ कि तुम भी मुझे समझो...!"23 सुबह-दोपहर-शाम की बड़ी दादी बड़ी की स्वाभिमानी औरत है। बड़ी दादी के लिए देश प्रेम सर्वोच्च है। क्योंकि दादा की मृत्यु अंग्रेज सिपाही से लड़ते हुए हो गई थी। तब से बड़ी दादी ने बदला लेनी की सोच रखी थी। लेकिन बड़ी दादी के लड़के के द्वारा यह सपना पूरा नहीं होता है तो वह पोते से उम्मीद करती है। लेकिन पोते अंग्रेज बहादुर की रेल में नौकरी करने चला जाता है। जो बड़ी

दादी को अंदर तक कमजोर कर जाता है और एक रात सबको छोड़कर बड़ी दादी घर से निकल जाती है। और जंगल में रहने लगती है। यह बड़ी दादी का स्वाभिमान था।

अस्मिता की तलाश करती स्त्री

इरा तिलक से कहती है “यह तुम्हारी दुनियाँ बड़ी कमीनी है। यहाँ औरत बगैर आदमी के रह ही नहीं सकती।...चाहे उसके साथ उसका पति हो, या भाई, या बाप। कोई न हो तो नौकर ही हो। पर आदमी की छाया जरूर चाहिए। यह विधान कैसा है ? तुम इसे नहीं समझ सकते, क्योंकि तुम औरत नहीं हो।”24 इरा पुरुष व पुरुष मानसिकता को बड़े अच्छे से समझती है। और वह कहती है कि “लोग आत्मा की बात करते है, पर तन पर एकांतिक अधिकार चाहते हैं- ऐसा अधिकार जो उनकी वासना की घड़ी के मुताबिक चलता है। रात को दो बजे उठाकर वे एकाएक प्यार-भरी आँखों से देखने लगते है। भरे बाजार में चलते-चलते वे चार जरूरी काम छोड़कर एकदम घर लौट सकते है...उनके लिए बुरी से बुरी औरत एक क्षण में पूरी तरह अच्छी बन सकती है, अगर वह उन्हे समर्पित हो जाए।”25

समाज कितना भी शरीफ बनाने का दिखावा करे पर सच्चाई यह है कि स्त्रियों के देह पर पुरुष की नजर आज भी होती है। इस कारण बाहर निकालने में स्त्री डरती भी है। कई बार पुरुष स्त्रियों को अपने पूरक या सहायक के तौर पर नहीं बल्कि वस्तु की तरह देखने लगता है। पुरुष के द्वारा प्रयोग में लाई जाने वाली कोई वस्तु। तभी तो इरा खाती “कहीं भी मैं टिकने न पाई, क्योंकि हर जगह एक ही मांग थी- अपने को बांटो।...तुम एक चीज हो...तुम्हारा रूप और यौवन ही तुम्हारी संपत्ति है।”26 क्या सचमुच स्त्री कोई वस्तु है ? या कोई चीज है ? स्त्रियों की लड़ाई इसी मानसिकता की लड़ाई है। जो उसे वस्तु या चीज की तरह इस्तेमाल करते रहना चाहता है। स्त्री कोई वस्तु या चीज नहीं है वह भी मनुष्य है। इसी वस्तु से मनुष्य समझे जाने की लड़ाई स्त्री

विमर्श लड़ाई है। स्त्री विमर्श की लड़ाई दुनिया की सबसे बड़ी लड़ाई है। क्योंकि यह दुनियाँ की सबसे ताकत के खिलाफ लड़ी जा रही लड़ाई है। दुनिया के सबसे शक्तिशाली साम्राज्य पितृसत्ता के खिलाफ लड़ी जा रही लड़ाई है। और घर के अंदर से लेकर बाहर तक लड़ी जाने वाली लड़ाई है।

चुनौतीयों का सामना करती स्त्री

वही बात उपन्यास जैसे कमलेश्वर स्त्री जीवन में पुरुष सहयोग के लिए लिखा हो, स्त्री जीवन से जुड़ी हुई समस्याए केवल स्त्री की नहीं है बल्कि वह समाज की समस्याए है। और इसमें स्त्री के साथ पुरुष को भी सहयोग करने की जरूरत है। यही कारण है कि इस उपन्यास के महत्त्वपूर्ण पात्रों में प्रशांत, नकुल व खजांची बाबू सब स्त्री के पक्ष में खड़े नजर आते है। खजांची बाबू कहते है कि “औरत को अपनी जिंदगी जीने का हक क्यों नहीं है ? हम कब तक उसे बेइज्जत करते रहेंगे ? आदमी औरत बदल ले, तो ठीक ! औरत आदमी बदल ले तो गलत वाह !...वाह ! क्या मैथेमेटिक्स है। आदमी एक में से एक घटाए, तो बचे एक, औरत एक में से एक घटाए तो बचे सिफर, वाह...!”27 इसी तरह से जब समीरा प्रशांत से अलग होकर नकुल के साथ रहने लगती है तो कभी-कभी वह बहुत अधिक परेशान हो उठती थी तब नकुल कहता था कि “तुमने कोई पाप नहीं किया है। अगर शादी पवित्र है तो तलाक भी उतना की पवित्र है। शादी के गलत हो जाने पर भी तलाक न लेना शायद गलत होता है...पर तुमने तो तलाक लिया है। शादी एक तरफा खेल नहीं है...और किसी की जरखरीद गुलाम नहीं हैं...!”28 यहाँ पर कमलेश्वर जी एक बड़ा ही अच्छा सवाल उठाया की पुरुष जो भी करता है। वह सही होता है। और अगर वही काम जब एक स्त्री करती है तो वह गलत क्यों हो जाता है। यह एक ही समाज में रह रहे स्त्री-पुरुष के लिए एक ही काम के लिए अलग-अलग पैमाने क्यों ? स्त्री विमर्श इस भिन्न पैमाने को मिटाने की भी लड़ाई है। आंदोलन है।

स्त्री की लड़ाई समाज की लड़ाई

स्त्री विमर्श को जब तक समाज की लड़ाई नहीं समझा जाएगा तब तक यह बहुत मुश्किल लड़ाई होती। स्त्री की समस्याओं को समाज की समस्या की तरह पुरुष भी अपना योगदान करे तब ही यह लड़ाई जीती जा सकती है। कमलेश्वर वही बात उपन्यास में खजांची बाबू को इस प्रस्ताव के लिए प्रस्तुत भी करते है। "आपने मेरे लिए लड़ाई की...क्यों न करता ? औरत अपनी लड़ाई अकेले क्यों लड़े ? क्या दुनिया में आदमी-औरत के बीच पैदा होने वाले हर सवाल का जवाब सिर्फ औरत को ही देना है ? नहीं, मेम साब...मैं आपके लिए नहीं शांति के लिए लड़ा था...।"29

घर में उपेक्षित स्त्री

भारतीय समाज में यदि घर के भीतर की स्त्री को देखा जाए तो वह बहुत अच्छी स्थिति में नहीं होती है। इसका एक बहुत बड़ा कारण यह है कि आर्थिक तंगी स्त्रियों को अक्सर में उपेक्षा का शिकार बनती है। सामान्य परिवारों में लड़कियों के काम लड़कों की तुलना में बाद में और कम किए जाते है। और इसके साथ ही लड़कियों के विवाह को लिए आर्थिक स्थिति का ठीक होना बहुत जरूरी है वरना दिन-रात घर मे काम करने वाली लड़की के लिए भी परिवार वालों के पास अच्छे घर परिवार में शादी करने के लिए हजारों बार सोचना पड़ता है। और कई बार लड़कियां इन सबका भुक्तभोगी भी बन जाती है। समुद्र में खोया हुआ आदमी उपन्यास में श्यामलाल का परिवार गहरी आर्थिक तंगी को झेल रहे है। तब श्यामलाल की पत्नी रम्मी अपनी छोटी लड़की के लिए कहती है कि "अपनी लड़की नहीं देखते...किसी से उन्नीस नहीं है...जब कोई नहीं मिलेगा तो ढकेल दूँगी भाड़ में। पर देख कर मक्खी कोई नहीं निगलता। !"30 इसी उपन्यास में आगे रम्मी कहती है कि "लड़का मेरा सीधा है। आफत की परकाला तो ये लड़कियां हैं। वह अपनी पढ़ाई पूरी कर गया, नौकरी-चकारिवाला हो गया...पर कभी उसने एक पैसे के लिए तंग नहीं किया। ये रानी जि तो

साल-भर पढ़ने के लिए गई और छील के रख दिया...आज यह किताब, कल वह कापी, परसों वह चन्दा...वह कैसे पढ़-लिख गया, पता लगा किसी को घर में !"31 यह आफत की परकाला लड़कियां भारतीय समाज में हमेशा से समझी जा रही थी और आज भी समझी ही जाती है। आज भी पढ़ने लिखने के लिए उनको घरों से बाहर बहुत कम भेजा जा रहा है। लड़कों को देश-विदेश कहीं भी भेज देगे पर लड़कियों के अक्सर रास्ते बंद होते है बाहर के।

"विलासी आर्यों ने औरत को हमेशा पुरुष की संपत्ति माना है...अपनी पत्नी अहिल्या को देखते ही वे भड़क उठे-तू कैसी पतिव्रता पत्नी है...तुझे किसी के कपट का पता नहीं चला...तू पुरुष और अपने पति का भेंद नहीं जान पाई ! रूपगर्विता ह्रदयहीना ! जा...पत्थर की शीला बन जा !"32 यह स्त्रियों की दशा नहीं दुर्दशा है कि दूसरे के छल कपट दूसरे के पापा की भी भुक्तभोगी बना रही है। एक निर्दोष स्त्री का दंडित होना अपने आप में एक गुनाह है। और स्त्रियों के साथ यह गुनाह सदियों से होता चला आ रहा है।

स्त्री विमर्श की दृष्टि से, स्त्री जीवन से जुड़े सवालों से, स्त्री जीवन की समस्याओं से तथा बदलते समाज व समय में स्त्री का जीवन किस तरह ऊपापोह व समाज के व्यंग्य वाणों का सामना कर रहा है, बदलते हुय समय में जब स्त्री स्वयं को बदल रही है तो उस पर खड़े होते तीखे सवाल आदि सब हम कमलेश्वर के उपन्यासों में पाते है। समाज में, परिवार में जो बदलाव आ रहा है। जैसे पारिवारिक ढ़ाचों का टूटना। इसके लिए कई बार स्त्रियों को पूरी तरह जिम्मेवार ठहरा दिया जाता है। इस तरह के छोटे-छोटे सवालों को कमलेश्वर अपने उपन्यासों में उठाते है। यानि कमलेश्वर के उपन्यास स्त्री जीवन व स्त्री विमर्श के कई पहलुओं को टच करते है। उन पर बात करते है। इस तरह स्त्री विमर्श की दृष्टि से उनके उपन्यास समृद्ध है।

कमलेश्वर के कहानियों में चित्रित नारी का स्वरूप

उपन्यासों की भाँति कमलेश्वर अपनी कहानियों में भी स्त्री जीवन से जुड़े उन तमाम प्रश्नों पर बात करते है। जिन सवालों को एक स्त्री अपने जीवन में सहती, भोगती व जीती है। एक स्त्री का जीवन स्त्री के रूप में कितना कठिन हो जाता है जब वह कई तरह के सवालों से घिर जाती है। जब वह समाज के, परिवार के अपनों के द्वारा छली जाती है। जब वह सब कुछ अपना समर्पित करके भी अबला असहाय हो जाती है। जब बिना गुनाह के उसे गुनाहगार बना दिया जाता है। जब उसकी उम्मीदें तोड़ी जाती है, जब उसके हौसलों को तोड़ा जाता है। तब अगर स्त्री अपने हक व अधिकार की बात करे तो उसे घर परिवार से बहिष्कृत होना पड़ा। स्त्री जब तक सब कुछ चुपचाप सहन करती जाती है, जब तक वह सबके विचारों से चलती है, तब तक वह ठीक रहती है। और जैसे ही वह इन सबका विरोध करती है तो भारतीय समाज में वह कुल द्रोही बना दी जाती है। यह स्त्री जीवन की अपनी समस्याएं है। कमलेश्वर अपनी कहानियों के माध्यम से इन तमाम प्रश्नों को उठाते है। कमलेश्वर की कहानियों में स्त्री जीवन के विभिन्न पहलू इस तरह से है।

जिंदगी के संतुलन को साधते-साधते व्यक्ति जीवन गुजर देता है किन्तु जीवन के संतुलन को साध नहीं पाता है। मनुष्य जीवन की यह एक बड़ी विपरीत नियति है। और इसे लेकर व्यक्ति कभी भी आश्वस्त नहीं होता। कहीं न कहीं इस स्तर पर वह संघर्षमय ही रहता है। वह चाहे बड़ा हो या छोटा। इस मामले में लगभग सभी मनुष्यों की नियति एक जैसी ही होती है।

उपेक्षाओं की शिकार स्त्री

कई बार स्त्रियों घरों में सब कुछ होते हुए भी उपेक्षा की शिकार हो जाती है। और उनकी बहुत सारी सामान्य इच्छाओं भी अधूरी दम तोड़ती रहती है। सीखचे कहानी में नंदलाल महाजन है, लेकिन उसकी स्त्री नंदलाल की उपेक्षाओं की शिकार है। नंदलाल महाजन की पत्नी कहती है

“लगभग डेढ़ साल बीतता जा रहा है, वह जो कुछ चाहती है उसे न मिल सका।”33 इसी कहानी में नंदलाल की पत्नी कहती है कि “उफ़, चाचा ने क्या समझकर ब्याह दिया-काश ! बाबू जिंदा होते तो इस उथले पानी में हाथ-पाव बाधकर न डाल देते। इस पानी में न तो तैरा ही जा सकता है और न ही डूबा ही जा सकता है।...यह जीवन बेकार है...यह जीना नरक से बदतर है, इन अभावों और यातनाओं के बीच से यदि वह उठ जाए तो कैसा रहे, कितना अच्छा हो।”34 नंदलाल की पत्नी की बातों से यह स्पष्ट है कि जैसे एक तरफ वह अपने पति की उपेक्षा की शिकार हुई है तो दूसरी ओर अपने चाचा के द्वारा भी वह उपेक्षित है। और ऐसे में वह अपने पिता को याद के रही है। यह सब देख व सहकर नंदलाल की पत्नी का मन खिन्न हो उठता है और वह इस दुनियाँ से निकलजाना चाहती है। लेकिन एक जालिम दुनियाँ जालिम समाज उसके आँखों के समाने नाच जाता है। लेकिन इस उपेक्षा की दुनिया से वह भटकी हुई दुनिया एक स्त्री को अच्छी लगती है। और उसे वह पाना चाहती है। लेकिन यह होना बड़ा की कठिन है। नंदलाल महाजन की पत्नी भी सोचती है कि “लेकिन दुनिया क्या कहेगी ? यही न कि वह भटक गई...।”35 लेकिन यह स्त्री के लिए आसान नहीं है और नंदलाल महाजन की पत्नी भी सोचकर रह जाती है। आगे का बदलाव वह नहीं कर पाती है।

सफेद तितलियाँ कहानी में सुमन के इच्छाओं की उपेक्षा उसका पति करता है। एक स्त्री अपने जीवन की सबसे बड़ी सार्थकता अपने मातृत्व में देखती है। और स्त्री के लिए उसकी पूर्णता का भी सवाल होता है। स्त्री अपने जीवन का तोष अपने मातृत्व में देखती है। लेकिन यदि किसी स्त्री को उसके पति के द्वारा जानबूझ कर मातृत्व से दूर रखा जाए, तो यह स्त्री की सबसे बड़ी उपेक्षा व यातना है। सफेद तितलियाँ कहानी की सुमन कहती है कि “पिता जी मेरा विवाह जसवंत से किया था। वह कुलीन था और अच्छे ओहदे पर था। मैंने सोचा था, कि मेरी जिंदगी एक खूबसूरत सपने की तरह बीत सकती है। लेकिन ऐसा नहीं हो पाया। उसे संतान से चिढ़ थी, और जब-जब

ऐसा मौका आया, उसने मुझे तरह-तरह की दवाइयाँ पिलाकर ऐसा किया, कि मैं माँ न बनाने पाऊँ। उसे मेरी खूबसूरती चाहिए थी, और वह कहता था, यह सुंदरता कायम रखने के लिए है। मैं तुम्हें हमेशा ऐसी ही देखना चाहता हूँ।"36 यह जो पुरुष कमाना है कि स्त्री अपनी सारी कामनाओं का त्यागकर पुरुष के लिए सजधज कर एक वस्तु की तरह उसके लिए बनी रहे। इससे बड़ा स्त्री के लिए दूसरा कोई दुख नहीं हो सकता।

स्त्री पराधीनता

पराधीनता किसी के भी जीवन का सबसे बड़ा दुख होता है। पराधीन होकर शेर भी मदारी के इसरो पर नाचने लगता है। और गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी कहा है कि पराधीन सपनहुँ सुख नहीं। यानि पराधीन व्यक्ति ही सबसे दुखी व्यक्ति होता है। कमलेश्वर इस स्त्री पराधीनता का बड़ा ही मार्मिक चित्रण अधूरी कहानी में किया है। विमल व सुधा प्रेमी-प्रेमिका है। लेकिन समाज के अधीन मजबूर सुधा है। जिसकी वेदना गहरी है। वह कहती है कि "नारी पराधीन तो होती ही है, चाहे जहां बैठा दी जाए, बैठना ही पड़ेगा। विमल ठीक ही तो कहते हैं, चाहे खुशी से चाहे अनिच्छा से, समाज की मर्यादा को तो स्वीकार करना ही पड़ेगा।"37 यह जो सुधा कह रही है चाहे खुशी से चाहे अनिच्छा से स्त्री को समाज के हर बात को स्वीकार करना पड़ता है। और वह कई बार अनिच्छित जिंदगी जीती है। या समाज की मर्यादा को जीती है। उसके ऊपर थोपे गए समाज के विचारों को जीती है। यानि वह अपने व्यक्तिगत विचारों का त्यागकर समाज के विचारों को जीती है। तभी तो सुधा कहती है "अब तो मैं बेबस हूँ, लाचार हूँ। तुम्ही बताओ अब मैं क्या करू ?"38 एक स्त्री का इतना लाचार, विवश व पराधीन होना और ऐसे में इन सबके खिलाफ उठती हुई आवाज ही स्त्री विमर्श की मुख्य आवाज है।

समाज के बंधनों से जकड़ी सुधा अपनी लाचारी प्रकट करते हुए विमल से जो कहती है वह पूरे स्त्री वर्ग की आवाज है। वह समाज की सच्चाई है। और वह आज भी उतना ही सच है। इसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। कहती है कि “तुम्हारे समाज का बंधन हमारे ऊपर अधिक है। तुम पुरुष हो और किसी भी बंधन को तोड़ने में समर्थ हो, किन्तु किसी स्त्री के पैरों में पड़ी तुम्हारे समाज की बेड़ियाँ उसकी लाश के साथ ही टूटती हैं।”39 सचमुच कई बार समाज व्यक्ति को बहुत कमजोर कर जाता है। बहुत विवश कर जाता है। और उसे उसकी इच्छाओं के विरुद्ध धकेल दिया जाता है। एक होता है किसी वस्तु का स्वयं से चुनाव करना और एक होता है समाज के द्वारा चुनकर दी गई वस्तु को बिना अपनी इच्छा-अनिच्छा के अपनाना। स्त्री के साथ अक्सर दूसरी वाली ही बात होती है। कि वह अपनी चीजों का चुनाव भी नहीं कर पाती। समाज द्वारा चुनी हुई वस्तु को अपनाना ही उसके पास विकल्प है। यह उसकी पराधीनता नहीं तो और क्या है।

अधूरी कहानी की सुधा विमल से कहती है कई “मेरे पास किसी को देने के लिए अब शेष ही क्या है ? शादी यदि शरीर का व्यापार मात्र है तो उस संबंध में मैं कुछ नहीं कहना चाहती। किन्तु इसका संबंध यदि हृदय, प्रेम, स्नेह और सहयोग की भावना से भी है तो तुम इतना क्यों नहीं समझते कि अब किसी अन्य पुरुष को ए सब देने की स्थिति में मैं नहीं हूँ।”40 क्या यह एक स्त्री की पराधीनता नहीं है कि वह मन से किसी और की हो और तन से किसी और की। और क्या उसके प्रेम का कोई मोल नहींण होता है। भारतीय समाज में तो एक स्त्री का भगवान से प्रेम भी खल जाता है। ऐसे में मनुष्य को प्रेम करना कहा स्वीकृत होगा। आत्मा की आवाज कहानी में गोपाल की पत्नी कहती है कि “वास्तव में शादी के बाद लड़की के जीवन में महान परिवर्तन होता है, विवाह के बाद पुरुष को रहन-सहन का कुछ ढंग ही बदलना पड़ता है, पर लड़कियों को तो पूरी आत्मा बदलनी पड़ती है।”41 यह परिवर्तन पराधीनता के कारण ही आते है। बलवानों की संगति में कमजोर हमेशा सताया जाता है।

मातृत्व की समस्या

राजा निरबंसिया में चाची चन्दा पर व्यंग्य करती हुई कहती है कि "राजा निरबंसिया अस्पताल से लौटे आए...कुलमा भी आई हैं !"42 यह बात चन्दा के लिए इसलिए कहीं गई कि चन्दा को बच्चे नहीं हो रहे थे। यदि एक स्त्री को बच्चे न हो तो समाज उसे जिस अशुभ दृष्टि से देखता है। और जिस तरह से लोग उसके प्रति विचार रखते है वह नितांत मनुष्य विरोधी होता है। जबकि बच्चे नहीं हो रहे है तो इसका मतलब यह नहीं है कि स्त्री में ही दोष है। पुरुष में भी तो हो सकता है। पर पुरुष के लिए कोई ताना नहीं है। "एक स्त्री से यदि पत्नीत्व और मातृत्व छिन लिया गया, तो उसके जीवन की सार्थकता ही क्या ?"43 यह विचार यह बताता है कि कमलेश्वर का स्त्रीयों के प्रति विचार क्या है। क्योंकि कोई भी लेखक अपने विचारों से ही किसी विचार की लड़ाई लड़ सकता है। स्त्री की बात करते हुए वे लगातार सचेत है। और स्त्री जीवन से जुड़े उन तमाम मुद्दों पर लिख रहे है जहां स्त्रियों के साथ अन्याय हो रहा है।

प्रेम और स्त्री जीवन

दुनिया बहुत बड़ी है कहानी यह सिद्ध करती है कि यदि एक स्त्री अगर अपनी शादी अपनी स्वेच्छा से करती है तो समाज के साथ उसका जीवन आसान नहीं होता। वह जींद होते हुए अपने समाज से बहिष्कृत कर दी जाती है। और जो जीवन भर व्यंग्य बाण सहती सुनती है वह अलग। तो क्या एक स्त्री का इन सबको सहन एक स्त्री के लिए आसान नहीं होता है। वह इन सबके बीच टूट जाती है। और उसे सचमुच लगने लगता है कि जैसे उसने अपनी स्वेच्छा से शादी करके बहुत बड़ा कोई अपराध किया हो। इन सबके बीच एक स्त्री लगातार कमजोर होती चली जाती है। इस कहानी में अन्नपूर्णा को लेकर जिस तरह की बातें हो रही है वह अन्नपूर्णा को अंदर तक छील जाती है। "पता नहीं, कैसी औरत है...लड़कियों पर तो इसकी परछाई भी नहीं पड़नी चाहिए।"44

किसी स्त्री का प्रेम विवाह करना आज भी इतना ही बड़ा अपराध है। आज भी लोग यही बातें करते है। परछाई न पड़ना दिखाई न देना यानि जैसे कोई दृश्य की बीमारी हो कि देखने मात्रा से लोग बिगड़ जाएगा। और फिर यह समस्या "देखा बेहया को...खूबसूरती बखान रहे है। मैं तो कदम नहीं रखने दूंगा घर में।"45 क्या स्त्री होना, प्रेम करना और फिर शादी करना क्या सचमुच इतना बड़ा गुनाह है, एक स्त्री के लिए। अगर है तो समाज को अपना विश्लेषण करना चाहिए। क्योंकि अब समय बदल रहा है।

स्त्री अस्मिता का प्रश्न

कुछ नहीं, कोई नहीं कहानी स्त्री अस्मिता का प्रश्न करती हुई कहानी है। क्या पुरुष के बिना स्त्री नहीं रह सकती। क्या स्त्री के जीवन का अस्तित्व पुरुष से है। एक स्त्री के लिए पुरुष कितना अनिवार्य कर दिया गया है। समाज के द्वारा । इस बात को हम गौरी के इस कथन से समझ सकते है "आदमी के बिना औरत जी नहीं सकती...दुनिया में तो पग-पग पर उसे आदमी चाहिए- आते आते, उठते-बैठते। बिना आदमी के यहाँ कोई काम नहीं होता। दूसरा मकान तक नहीं ले सकती। पहले ही पूछते है तुम्हारा आदमी कहाँ हैं ? एक आदमी का होना कितना जरूरी है, यह जान गई हूँ चाहे वह आठ बरस का बच्चा ही हो।"46 गौरी का यह कथन यह बताता है कि स्त्री आज भी अपना स्वतंत्र जीवन जीने के लिए मुक्त नहीं है। और यह भी बताता है कि जैसे पुरुष के बिना स्त्री की कोई सत्ता नहीं है।

तलाश यह एक परिवार की तलाश थी। समाज और परिवार में नारी के प्रति बदलते नजरिए और नारी के अंदर हो रहे बदलाव को यह कहानी सशक्त ढंग से पेश करती हुई कहानी है। प्रौढ़ माँ और जवान बेटी एक ही घर में रहकर अजनवी है। अपने अतीत से मुक्त होने की, माँ की छटपटाहट और स्मृतियों के बीच बेटी द्वारा वर्तमान को पढ़ने की कोशिश, दो ऐसे दृष्टि बिन्दु है

जिन पर यह कहानी नारी के एकांतिक होने की पीड़ा को व्यक्त करती है। पति की मृत्यु के बाद एक स्त्री को अपने अस्तित्व की तलाश ही तो है। तलाश कहानी के माँ के भीतर।

देह व्यापार व महिला

माँस का दरिया यह नगर या महानगर की कहानी भले ही हो लेकिन यह स्त्रियों के एक वर्ग विशेष की स्त्रियों की कहानी है। जिसे समाज के द्वारा वेश्या कहाँ जाता है। यह वर्ग देह व्यापार से अपना जीवन यापन करता है, लेकिन देह-व्यापार में स्त्रियाँ तभी तक कमाऊँ है, जब तक देह पर चमक व ताकत है। शरीर में आकर्षण है कसावट है। देह ढलने के बाद उनका व्यापार खत्म हो जाता है, और इसके साथ ही उनके जीवन में अंधेरा छाने लगता है। जीवन आर्थिक तंगी से गुजरने लगता है। इस वर्ग की महिलाये जवानी में तन की पीड़ा को सहती है तो बुढ़ापे में तन व मन दोनों की पीड़ा को सहती है। यह भी स्त्री जीवन का एक पक्ष है, जो अक्सर समाज के द्वारा उपेक्षित रह जाता है। इस वर्ग की महिलाओं को महिला समझा ही नहीं जाता है। और न ही समाज उनके साथ महिला जैसा व्यवहार करता है और न अपने में मिलने देना चाहता है। यानि इस दुनिया में और महिलाओं की दुनिया में इनकी अपनी एक अलग ही दुनिया है। जहां तन व मन दोनों दुखता रहता है। इस वर्ग की महिलाओं के लिए कुछ खास इनके लिए शब्द गढ़े गए है जो चरित्र हीनता के प्रतीक है। जबकि इन महिलाओं का खरीददार पुरुष ही होता है। पर पेट की चुनौती बड़ी है पुरुष के ऊब से उपजे गंदगी से।

घर के भीतर प्रताड़ित स्त्री

एक अश्लील कहानी में कुंती की दारुण स्थिति का चित्रण है। भारतीय समाज में विवाह के बाद स्त्री पर पति अपना पूरा नियंत्रण चाहता है। वह कब क्या करेगी, क्या नहीं करेगी से लेकर कब क्या करेगी, नहीं करेगी तक की पूरी तैयारी पति करता है। कहाँ आना है, कहाँ जाना है से लेकर

पहनने ओढ़ने तक व घर के काम से लेकर बाहर के काम तक सब जगह पति का नियंत्रण। जैसे उसका कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व न हो, उसके पास कोई अधिकार नहीं और इसके साथ ही घर-परिवार की अवसर-बेअवसर डाट पाटकर उसके हिस्से में। बंद घरों में पिटी जाना सब उसके हिस्से में ही आया है। एक अश्लील कहानी में कुंती पति के हाथों बंद मकान में प्रताड़ित होती है। “मुहल्ले वालों को सुनाना चाहती है। समझती है मेरी इज्जत खराब कर लेगी।”47 एक स्त्री प्रतिकार या विरोध अपनी बात करके ही कर सकती है, वह हाथ उठाकर या हथियार उठाकर नहीं करती, पर पुरुष के हाथ जैसे हाथ व हथियार दोनों उठाने का अधिकार है।

स्त्री विमर्श की दृष्टि से एक अश्लील कहानी महत्त्वपूर्ण कहानी है। लेखक इसमे कथावस्तु को ऐसे तैयार किया है, जिससे समाज की नग्नता उजागर होती है। पुरुष स्त्री को किस नजरिए से देखता है, वह नजर बड़ी घातक होती है। चंद्रनाथ का कुंती के प्रति जो सोच है वह बड़ी हिंसक सोच है। स्त्री इस तरह के हिंसक सोच का शिकार समाज में अक्सर हो जाती है। और घर के भीतर परिवार व पति का दंश। कुंती जहां एक तरफ पति की बर्बर यातना से प्रताड़ित है तो दूसरी तरफ चंद्रनाथ की पाशविक वासना भरी नजरे उस पर नजर रखती है। यानि पुरुष की दुनिया में स्त्री अक्सर या तो प्रताड़ित है या तो वासना की शिकार। कमलेश्वर इस बात को बार-बार अलग-अलग कहानियों में रेखांकित करने की कोशिश किया है।

जन्म कमलेश्वर की ऐसी कहानी है। जिसमें स्त्री इस कारण से घर में उपेक्षा का शिकार हुई है कि वह तीन लड़कियों को जन्म दिया है और अभी तक उसे कोई लड़का नहीं हुआ है। घर वालों को लड़का चाहिए। लड़की नहीं। यह भारतीय समाज की एक अहम मान्यता है कि घर में लड़का जरूर होना चाहिए। लड़कियों को वह जैसे अपनी संतान मान ही नहीं पाता है। “और चंदू की पत्नी पिछले तीन महीनों से सकुचाई-सकुचाई रहती है। जैसे उसने कोई भीषण पाप किया हो और उस पाप की लपेट में पूरा घर आ गया हो। अब तक वह चंदू से सबके सामने बात कर भी लेती थी

पर अब न जाने क्यों नहीं कर पाती...घर का प्रत्येक प्राणी अपनी तरह दुखी है-और उसकी आँखों के सामने वह पहला दिन घूम जाता है जब वह बारह बरस पहले उसकी गोद पहली बार भरी गई थी...वह खुशी अब क्यों गम हो गई ? ऐसा कौन-सा अनिष्ट उसने कर दिया है, जो कोई सीधे मुंह बात नहीं करता।"48 यह बात तब की है जब उसके पास तीन लड़कियां है। और एक बच्चा उसके गर्भ में है और दादी बहु को देख कर यह घोषित कर दी है की अबकी बार भी लड़की ही है।

यह कहानी आज से करीब सत्तर साल पहले लिखी गयी थी। तब समाज बच्चों के नाम पर लड़कों के कमाना में डूबा हुआ था। लड़की का होना अपने आप में जैसे पाप व असगुन माना जाता था। और लड़के का होना भाग्योदय समझा जाता था। और यह आज भी है कि लड़कियों से अधिक हम लड़कों की कमाना करते है और उसे तवज्जो देते है। जन्म कहानी में दादी के साथ पूरे परिवार की मंशा यही है कि घर में बहु को लड़का हो लड़की नहीं चाहिए। क्यों कि तीन लड़कियां पहले से ही घर पर बोझ की तरह लदी हुई है। दादी कहती है कि "अब आधी रात में क्या होगा ? मेरे तो प्रान सूख रहे हैं। वैसे ही तीन-तीन लड़कियों का बोझ है...इतनों का पूरा नहीं पड़ता और यहाँ रोज यही लगा है। घर नहीं हुआ जच्चाखाना हो गया...।"49 यह व्यामोह आज भी टूटा नहीं है। आज भी हमारा समाज प्रथम वरीयता लड़के को ही देता है। लड़की आज भी उसके लिए कमोबेश वही जगह रखती है जो पहले थी।

इस कहानी में दो दृष्टिकोण विद्यमान है। एक तो लड़के व लड़की को लेकर और एक दूसरा इन बच्चों को जन्म देने वाली माँ को लेकर। माँ के गर्भ से यदि लड़के का जन्म नहीं हो रहा है तो माँ भी लगातार उपेक्षाओं का शिकार हो जाती। परिवार में वह प्रतिष्ठा व इज्जत नहीं होती है जो होनी चाहिए। अंत में बहु को दादी के अनुमान के विपरीत लड़का होता है। जो परिवार अभी तक लड़की पैदा होने की आशंका में डूबा दुखी था वही परिवार अचानक से लड़का पैदा होने की खबर

से खुशियों मे डूब जाता है। और दादी कहती है "कमालिया उठ ! दरवाजे पर थापें लगा...देहरी पर गंधक जला...उठ...और देख जरा कांसे की थाली बजा दे...तेरे भैया हुआ है।"50

कमलेश्वर के स्वयं स्त्री विषयक दृष्टिकोण बड़े ही स्पष्ट थे। वे तमाम दकियानूसी को त्यागकर उसके जीवन में उसके स्वयं के जीवन की हिस्सेदारी चाहते है, और चाहते है कि पुरुषों कि तरह स्त्री भी अपना जीवन जिए। यही समानता है। यही स्वतंत्रता है और यही जीवन का लोकतंत्र है।"आधुनिक नारी अब अपनी पूरी गरिमा, देह-संपदा और वास्तविक सम्मान के साथ आई है। यही सच है, मित्रों मरजानी, लाल परांदा, जिंदगी और गुलाब के फूल आदि बहुत-सी कहानियों की नारियाँ नितांत प्रामाणिक संदर्भों और जीवन-प्रसंगों से जुड़ी हुई हैं, जो पुरुष के माध्यम से जीवन-मूल्यों या उसके अर्थों की खोज में तृप्त नहीं हैं, वे अपने पूरे व्यक्तित्व के साथ सहयोगी जीवन-पद्धति की भागीदार हैं, या स्वयं जिम्मेदार। सेक्स अब पाप-बोध देनेवाली क्रिया नहीं, एक वास्तविक और अनिवार्य आवश्यकता के रूप में स्वीकृत और समादृत है। वह लेखक की कुंठा का चटखारा नहीं, पात्रों की भौतिक और दैहिक अनिवार्य आवश्यकताओं की सहज मांग है। औरतें अब औरतें हैं, वे झूठी सती या वेश्याएं नहीं हैं, इसलिए नई कहानी खलनायिकायों से शून्य है, जिनकी पहले हर कदम पर जरूरत पड़ती थी। अब संबंधों के ध्रुव दो है- स्त्री और पुरुष- जो सारी संगतियों और विसंगतियों के साथ अपनी प्राकृतिक अपेक्षाओं से सीधे-सीधे सम्बद्ध है। संशयग्रस्त संबंधों के बीजाबीजाते दलदल अब नहीं हैं। नारी की देह अब उसके अपने निर्णय की वस्तु है। धोखाधड़ी, बलत्कार या दीदीवाद-भाभिवाद विकृत परंपरा का मानसिक अत्याचार अब लेखकीय सहानुभूति का विषय नहीं रह गया है।"51

समकालीन स्त्री विमर्श दशा व दृष्टि

धरातल पर स्त्रियों की हालत में आज भी कोई खास बदलाव नही आया है। अपने स्वतंत्र विचारों की अपेक्षा आज भी उनके मन में समाज के बातों का भय अधिक रहता है। इस तरह से जीवन जीने वाली स्त्रियों की संख्या अधिक है। इसके उलटपूर्ण रूप से स्वतंत्र जीवन जीने वाली स्त्रियों की संख्या बहुत कम है। इस तरह से यदि हम देखे तो स्त्री विमर्श को संगठित होकर स्त्रियों की दशा व दिशा में सुधार करने की और अधिक जरूरत है। उन्हे आत्मनिर्भर बनाने की जरूरत है। जिससे वे अपने निर्णय ले सके। एक बात और कि भारतीय संदर्भ में स्त्री विमर्श का यह मतलब कतई नही है कि वह बिल्कुल घर परिवार से अलग होकर अपना जीवन जीना चाहती है ऐसा नही है। और वह चीजों का बहिष्कार भी नही करती बल्कि वह चीजों में सुधार चाहती है। कुछ चीजे कुछ बातें जो उसे भी मनुष्य होने का बोध कराए वरना वह अपने आप को घर की एक मशीन की तरह समझ लेती है। जिसे चौबीस के चौबीस घंटे चलते रहना है। वह इन चीजों में सहूलियत चाहती है। वह इन चीजों से विद्रोह नही बल्कि बदलाव की मांग करती है। जो कुछ उस पर अनावश्यक रूप से थोप दिया गया है उससे वह निजात चाहती है। वह घर परिवार से विद्रोह नही करती है बल्कि बल्कि घर परिवार में चली आ रही जड़ताओं से वह विद्रोह करती है। बाकी भारतीय परिवार में स्त्री घर की धुरी कल भी आज भी है और कल भी रहेगी। यह एक सृजनात्मकता है जो स्त्री में है। स्त्री एक ऐसी ध्रुवी है जो घर को, समाज को अपने सृजन तथा अपनी भावना दोनों से जोड़ती है। यह सामर्थ ईश्वर ने और किसी को नही दिया है। इस कारण ही उसे शक्ति कहाँ गया है।

कमलेश्वर अपने यहाँ स्त्रियों को इतनी छूट दे रखी है कि वह शादी के बाद भी प्रेम कर लेती है। यह आजादी कमलेश्वर की नहीं बल्कि यह आजादी समय की आजादी है। यह अच्छा हो या बुरा इस पर बात नहीं होती है। लेकिन यह है यह सच है। वह घुटन में है, दर्द में है, तकलीफ में है

इन सबके बावजूद वह प्रेम में है। और ऐसी स्थिति में कमलेश्वर के यहाँ स्त्री पति से मुक्त हो कर अक्सर प्रेमी का साथ चुन लेती है। कई बार वह इन दोनों के मध्य के दबाव को भी झेलती है। यह बदलाव कमलेश्वर की स्त्रियों में है। कमलेश्वर के नारी पत्रों में है। यहाँ स्त्रियाँ परंपरागत अनुशासन को नकारा है इसमें कोई दो राय नहीं है। किन्तु वह अपनी ठोस जमीन नहीं तलाश पाई है। यह बात हम कह सकते है। और यही उसके जीवन में संघर्ष है। जमीन तलाशने का संघर्ष। यह हम लोक जीवन लोक व्यवहार में भी देख सकते है कि स्त्री दो ध्रुवों (मायका व ससुराल) के बीच वह त्रिशंकुवत लटकी है। और इन दोनों ध्रुवों में उसकी स्वतंत्र जमीन कोई नहीं है। और स्वतंत्र जमीन का न होना ही स्त्री जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी है। उसे अपनी जमीन तैयार करनी होगी।

कमलेश्वर के कथा साहित्य में स्त्री विषयक अनेक दृष्टिकोण मिलते है। कई बार वह बहुत परंपरागत विचार रखने वाली स्त्री तो कई बार एकदम आधुनिक ढंग की स्त्री है तो कई बार इन दोनों के मिलिजुली स्वभाव वाली स्त्री है। जैसे यदि हम देवा की माँ कहानी की बात करें तो देवा की माँ परंपरगत विचार रखने वाली स्त्री के रूप में हमरे सामने आती है। यानि उसका पति दूसरी शादी कर लिया है और इससे कोई वास्ता नहीं रखता है फिर भी देवा की माँ उसे ही अपना पति मानती है और अपना उसके नाम से सुहाग भी रखती है। यानि कि एक भोली-भाली साधारण सी स्त्री। और एकदम आधुनिक किस्म की स्त्री के तौर पर कई स्तरीय कमलेश्वर के कथा साहित्य में जैसे तीसरा आदमी की चित्रा, डाक बंगाल की इरा, समुद्र में खोया हुआ आदमी की तारा, काली आंधी की मालती, वही बात की समीरा, राजा निरबंसिया की चन्दा आदि लोक-लाज के डर भय से मुक्त है और अपने जीवन को जीना चाहती है बिना किसी कम से कम सामाजिक दबाव के या सामाजिक दबाव की निरर्थकता जैसे इनको पाता हो और ए उसे ठुकरा देती है। एक सड़क सत्तावन

गालियां की बंसिरि बहुत कुछ एक मिली जुली स्वभाव वाली स्त्री है। कहीं उसके मन में बहुत विद्रोह है तो कहीं किसी खोने में बहुत कुछ चुपचाप स्वीकार कर लेने का बोध भी उसमे है।

संदर्भ ग्रंथ

1 कमलेश्वर नयी कहानी की भूमिका राजकमल प्रकाशन संस्करण 2015 पृ.11

2 डॉ. के. एम. मालती स्त्री विमर्श:भारतीय परिप्रेक्ष्य वाणी प्रकाशन संस्करण 2017 पृ.153

3 डॉ. के. एम. मालती स्त्री विमर्श:भारतीय परिप्रेक्ष्य वाणी प्रकाशन संस्करण 2017 पृ.153

4 डॉ. के. एम. मालती स्त्री विमर्श:भारतीय परिप्रेक्ष्य वाणी प्रकाशन संस्करण 2017 पृ.155

5 डॉ. के. एम. मालती स्त्री विमर्श:भारतीय परिप्रेक्ष्य वाणी प्रकाशन संस्करण 2017 पृ.156

6 डॉ. के. एम. मालती स्त्री विमर्श:भारतीय परिप्रेक्ष्य वाणी प्रकाशन संस्करण 2017 पृ.157

7 डॉ. करुणा शर्मा कमलेश्वर के कथा साहित्य में स्त्री विमर्श नवचेतन प्रकाशन संस्करण 2011 पृ.61

8 डॉ. संतोष आर. नागुर मृणाल पांडेय के साहित्य में नारी विमर्श ए. बी. एस. प्रकाशन वाराणसी संस्करण 2018 पृ.116

9 डॉ. संतोष आर. नागुर मृणाल पांडेय के साहित्य में नारी विमर्श ए. बी. एस. प्रकाशन वाराणसी संस्करण 2018 पृ.117

10 डॉ. संतोष आर. नागुर मृणाल पांडेय के साहित्य में नारी विमर्श ए. बी. एस. प्रकाशन वाराणसी संस्करण 2018 पृ.117

11 डॉ. संतोष आर. नागुर मृणाल पांडेय के साहित्य में नारी विमर्श ए. बी. एस. प्रकाशन वाराणसी संस्करण 2018 पृ.118

12 डॉ. संतोष आर. नागुर मृणाल पांडेय के साहित्य में नारी विमर्श ए. बी. एस. प्रकाशन वाराणसी संस्करण 2018 पृ.118

13 डॉ. संतोष आर. नागुर मृणाल पांडेय के साहित्य में नारी विमर्श ए. बी. एस. प्रकाशन वाराणसी प्रथम संस्करण 2018 पृ.118

14 डॉ. संतोष आर. नागुर मृणाल पांडेय के साहित्य में नारी विमर्श ए. बी. एस. प्रकाशन वाराणसी प्रथम संस्करण 2018 पृ.118

15 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.49

16 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.49

17 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.45

18 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.51

19 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.22

20 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.181

21 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.237

22 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.205

23 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.526

24 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.238

25 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.239

26 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.278

27 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.557

28 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.548

29 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.559

30 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.322

31 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.322

32 कमलेश्वर समग्र उपन्यास प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2020 पृ.20

33 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.68

34 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.69

35 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.70

36 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.65

37 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.78

38 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.78

39 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.79

40 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.77

41 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.100

42 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.135

43 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.137

44 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.170

45 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.170

46 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.302

47 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.277

48 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.55

49 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.57

50 कमलेश्वर समग्र कहानियाँ प्रकाशन राजपाल एण्ड संज संस्करण 2018 पृ.59

51 कमलेश्वर नई कहानी की भूमिका प्रकाशक राजकमल संस्करण 2015 पृ.19